दिलख़ुश

प्रेमा नौटियाल

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Prema Nautiyal 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication,
please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7825-421-5

Cover design: Nidhi Nautiyal

First Edition: April 2026

प्रस्तावना

'दिलख़ुश ' केवल एक कहानी नहीं है, बल्कि उस मासूम आवाज़ का प्रतीक है, जो बार-बार व्यवस्था की दीवारों से टकराती है। यह उस मज़दूर पिता की पुकार है, जो निरक्षर होने के बावजूद अपने बेटे को शिक्षा का उजाला देना चाहता है।

आज भी हमारे समाज में असंख्य 'दिलख़ुश' हैं जो गरीबी, अनभिज्ञता, आर्थिक कारणों, अवसरों की कमी, या अन्य कारणों से समय से स्कूल नहीं जा पाते और उनकी उम्र अधिक होने के कारण शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE 2009) ने रास्ते तो खोले हैं, लेकिन ज़मीनी हकीकत अब भी चुनौतियों से भरी है।

इस पुस्तक को लिखने की प्रेरणा मुझे तब मिली, जब मैंने करीब से देखा कि किस तरह से बच्चे की उम्र अधिक होने के कारण स्कूल जाने की सामान्य-सी इच्छा भी कई परिवारों के लिए एक लंबी लड़ाई बन जाती है। यह कहानी उन सभी माता-पिताओं और बच्चों की है, जो संघर्षों के बावजूद उम्मीद नहीं छोड़ते।

इस कथा का उद्देश्य पाठकों को मनोरंजन भर देना नहीं है, बल्कि उन्हें सोचने पर मजबूर करना है कि आखिर क्यों शिक्षा का सपना अब भी दूर-दराज़ गाँवों और गरीब परिवारों के बच्चों के लिए मुश्किल है।

'दिलख़ुश ' केवल एक पात्र नहीं है, वह हमारे समाज का आईना है। यदि इस किताब को पढ़ने के बाद कोई पाठक किसी 'दिलख़ुश ' को स्कूल तक पहुँचाने में मदद करता है, तो मेरा यह प्रयास सफल होगा।

आप सभी पाठकों से मेरा विनम्र अनुरोध है कि इस पुस्तक को केवल कहानी की तरह न पढ़ें, बल्कि इसे एक सामाजिक दस्तावेज़ की तरह देखें, जो हमारे आस-पास की सच्चाइयों से रूबरू कराता है।

प्रेमा नौटियाल, उत्तराखण्ड

भूमिका

श्रीमती प्रेमा नौटियाल जी का जन्म उत्तराखण्ड की सुरम्य वादियों में हुआ। बचपन से ही वे संवेदनशील और रचनात्मक प्रवृत्ति की रही हैं। सहज और सादगीपूर्ण जीवन में पली-बढ़ी प्रेमा जी को अपने आस-पास के समाज और उसमें रहने वाले साधारण से लोगों के संघर्ष सदैव गहराई से छूते रहे।

यद्यपि उनका बचपन ऐशो-आराम और सुरक्षित वातावरण में बीता, परंतु उन्होंने सदैव उन परिवारों के बारे में सोचा जो रोज़मर्रा की कठिनाइयों से जूझते हैं। यही सोच धीरे-धीरे उनके व्यक्तित्व का एक अहम हिस्सा बन गई।

शिक्षा के क्षेत्र से जुड़े रहने के कारण उन्होंने करीब से अनुभव किया कि विशेषकर दिव्यांग बच्चों और वंचित वर्गों के लिए शिक्षा कितनी बड़ी चुनौती है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE) और सर्व शिक्षा अभियान जैसी पहल ने उन्हें गहराई से प्रभावित किया और इस दिशा में सेवा करने के लिए प्रेरित किया।

प्रेमा नौटियाल जी ने शिक्षा जगत में लंबे समय तक कार्य करते हुए अनेक बच्चों और परिवारों से संवाद किया है। उनके अनुभव और संवेदनाएँ ही इस पुस्तक की नींव बने। यह पुस्तक उनके जीवन भर की सोच और उस पीड़ा का परिणाम है जो उन्होंने अपने आस-पास महसूस की।

'दिलख़ुश' उनके लिए केवल कहानी नहीं है, बल्कि उन अनगिनत बच्चों की सामूहिक आवाज़ है जो शिक्षा और सम्मान के सपने अपनी आँखों में सँजोए हैं।

आभार

इस किताब के शब्दों में समाई हर मुस्कान, हर आँसू और हर उम्मीद किसी न किसी के प्यार और सहयोग का परिणाम है।

सबसे पहले मैं अपने पिता श्री महेश्वरी दत्त डिमरी के प्रति अनंत कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ। वे न केवल एक शिक्षाविद् और वैज्ञानिक रहे, बल्कि मेरे भीतर देखने, सोचने और खोजने की भूख जगाने वाले पहले गुरु भी थे। उनके बताए छोटे-छोटे प्रयोग, अनगिनत कथाएँ और हमेशा कुछ नया करने की प्रेरणा ने मुझे रचनात्मक बनने का साहस दिया। यदि इस पुस्तक में कहीं जिज्ञासा और सहजता का स्वर है, तो उसके बीज उन्हीं की देन हैं।

मेरी माँ, श्रीमती भुवनेश्वरी देवी। उनका प्रेम, उनकी चुप सहनशीलता और अनकहे किए हुए त्याग ने मेरी हर सुबह सम्भव बनाई। घर की छोटी-छोटी चीज़ों में खुश रहने की उनकी आदत, मुस्कुराहट से दुखों को संभाल लेने की उनकी शक्ति और मेरे हर काम में भरोसा- ये सब इस लेखन की नींव रहे।

मेरे जीवन का हर कदम परिवार की देन है।

मेरी पुत्री निधि नौटियाल, जिनकी हँसी और छोटी-छोटी जिज्ञासाएँ मेरे लिखने को सहज बनाती रहीं।

मेरे पति श्री रमेश नौटियाल, जिनके धैर्य, समझ और हर व्यावहारिक मदद के बिना यह लेखन सम्भव न होता।

उनका साथ और घर की जिम्मेदारियाँ में साझेदारियों मेरे लिए अनमोल रहीं ।

मेरे पुत्र सिद्धार्थ नौटियाल और मेरी बहन प्रभाकिरन, जिनकी आँखों में मिली प्रोत्साहना और गर्व ने मुझे हर बार आगे बढ़ने की हिम्मत दी।इन सबका विश्वास और प्यार इस पुस्तक का सबसे बड़ा सहारा है। उनके बिना यह प्रयास अधूरा रहता।

मैं अपने प्रिय शिक्षा-जगत से जुड़े मित्रों और साथियों, रामसिंह चौहान, डॉ. सुनीता भट्ट, सुरेंद्र सिंह बिष्ट, नलिनी डिमरी, कमला डबराल, बिजला नेगी, अनिल शाह, उर्मिला कठैत, कल्पना बिष्ट, शीला नेगी और ममता थापा का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ। इन सभी ने अपने अनुभव, सुझाव और संवेदनशील दृष्टिकोण साझा करके इस कहानी को ज़मीन से जोड़ने और वास्तविकता के करीब लाने में मेरी मदद की।

मैं उन अनगिनत चेहरों को भी धन्यवाद कहती हूँ जिनसे मैं मिलने, सुनने और सीखने आयी। विद्यालयों के बच्चे, अध्यापक-सखियाँ, और ग्रामीण परिवार जिनकी ज़िन्दगी की सादगी और संघर्ष ने मुझे बार-बार सोचने पर मजबूर किया। आपकी कहानियाँ और विश्वास ही इस पुस्तक की आत्मा हैं।

अंत में, इस पूरी यात्रा में साथ देने, सहन करने और प्रेरित करने वाले हर व्यक्ति के लिए मेरा हृदय भरा हुआ है। अगर इस पुस्तक से किसी एक भी 'दिलख़ुश' को स्कूल का मार्ग मिला, या किसी परिवार की आँखों में उम्मीद की नयी किरण जगी, तो मेरा लेखन सार्थक होगा।

सदा कृतज्ञ,
प्रेमा नौटियाल

श्रीमती मनोहरी देवी नौटियाल जी
(पत्नी - श्री बालकृष्ण नौटियाल जी)

यह पुस्तक मेरी बुआ, श्रीमती मनोहरी देवी नौटियाल जी को समर्पित है।
जिनके आँचल ने मुझे माँ का स्नेह दिया, जिनकी डाँट में पिता का अनुशासन था, और जिनके मौन त्याग ने मुझे वह जीवन दिया जिस पर आज मैं खड़ी हूँ।
यदि मेरे शब्दों में ऊष्मा है, तो वह उनकी ममता से उपजी है।

यह कृति उनके प्रति मेरे प्रेम, सम्मान और आभार का छोटा-सा प्रतीक है।

दिलख़ुश

एक हट्टा–कट्टा नौजवान मज़दूर साइकिल पर सवार, पीछे कैरीअर पर एक 12–13 साल का लड़का, जो अपनी उम्र से कुछ ज़्यादा ही लम्बा और बड़ा दिख रहा था। रंग धूप से काला, धूप से हुए भूरे और काले बाल, लम्बे–लम्बे पैर, घिसी हुई चप्पलें जिनकी सिलाई टूटने को थी। शर्ट के आधे बटन टूटे हुए, गंदे, घुटने के नीचे तक आती पैंट; और आगे वाले के कपड़ों पर जगह–जगह पेंट, वार्निश और पसीने की महक का भपका दूर से ही आ रहा था। यह सब लिए भरी दुपहरी वे कहीं से आ रहे थे।

वह एक स्कूल के सामने रुका। चौकीदार ने पूछा — "क्या काम है?"

वह बोला — "बच्चे को एडमिशन दिलवाना है।"

दोनों प्रिंसिपल के कमरे में पहुँच गये। गमछे से पसीना पोंछता हुआ वह अंदर आया — "साब, प्रणाम।" कहकर दोनों पैरों के बल नीचे बैठ गये।

"क्या काम है?"
"साहब, बच्चे को पढ़ाना है।"
"टी.सी. लाए हो? कौन-सी कक्षा में पढ़ता था? कौन-से स्कूल में था? कहाँ का रहने वाला है? आधार कार्ड है या नहीं? इसके नाम का पासबुक है? राशन कार्ड है? किस-किस जाति में आता है? ..."

लेकिन उसके पास इन सबका जवाब केवल "ना" था।

"साब, यह कभी स्कूल नहीं गया। और ये चीज़ें क्या होती हैं? पढ़ाई में इन सबका क्या काम? आप हमारे बच्चे को इस स्कूल में रख दो बस। इसे पढ़ाना–लिखाना है। हमारे घर पूरे ख़ानदान में कोई भी पढ़ा–लिखा नहीं है। इसे पढ़ा–लिखाकर बड़ा आदमी बनाना है।"

प्रिंसिपल साहब ने टेबल पर रखी घंटी बजाई और चपरासी से कहा —
“इन्हें समझाओ कि अब यह बड़ा हो चुका है। कक्षा एक में पाँच–छह साल का बच्चा पढ़ता है। हम इसे यहाँ एडमिशन नहीं दिलवा सकते। इसे कक्षा एक में भर्ती नहीं कर सकते।”

मज़दूर ने बहुत हाथ–पैर जोड़े।
“मैं बहुत दूर गाँव से आया हूँ। मेरी इच्छा है कि यह पढ़े। जो भी फ़ीस पड़ेगी, मैं मेहनत-मज़ूरी करके भर दूँगा। परंतु आप इसे स्कूल में एडमिशन दिलवा दीजिए साब।”

लेकिन प्रिंसिपल के लिए बहुत मुश्किल था उस बच्चे को एडमिशन देना।

वह मज़दूर अपनी साइकिल पर मायूस होकर लौटा और चौकीदार से अन्य स्कूल का पता पूछा।

उसके बाद तो जैसे नम्बर ही लग गया अनेक स्कूलों में जाने का।
परंतु हर एक विद्यालय का वही प्रश्न और वही उत्तर रटे-रटाए।
और फिर बच्चे को देखते हुए कहते —
“यह तो अपनी उम्र से बड़ा दिख रहा है। इसके साथ के बच्चे हमारे स्कूलों में नौवीं-दसवीं में पढ़ते हैं।”

कोई हँसते हुए कहता — “आज तक सोए थे क्या?”
कोई कहता — “कहाँ बंद करके रखा था?”

कई दिनों तक अनेक स्कूलों के चक्कर लगाने के बाद भी वह निराश नहीं हुआ और अपनी खोज जारी रखी। और अंत में वो खोज सम्पन्न भी हुई।

वह एक विद्यालय में गया। वहाँ उन्होंने बताया —
“हम तो नहीं, लेकिन एक सरकारी विद्यालय है। वहाँ एक शिक्षिका हैं, नीलिमा। वही बताएँगी कि इसे कहाँ पढ़ाना है, पढ़ सकता है या नहीं।”

मज़दूर ने फ़ोन नम्बर लिया और मैडम को फ़ोन किया।
“मैडम, मैं बच्चे को पढ़ाना चाहता हूँ।”
मैडम ने कहा — “तुरंत चले आओ। पुलिया से बाएँ, ट्यूबवेल के पास ही विद्यालय है। तुम बच्चे को लेकर आ जाओ।”

मज़दूर तेज़ी से साइकिल चलाता हुआ ट्यूबवेल की टंकी के पास पहुँचा। फिर फ़ोन किया —
"मैडम जी, आप कहाँ हो? मैं ट्यूबवेल के पास हूँ।"
"मैं भी वहीं हूँ।"
"पर आप कहीं दिख नहीं रही हैं।"

असल में मज़दूर और मैडम अलग-अलग ट्यूबवेल के पास खड़े थे।
"ट्यूबवेल के पास कहाँ हो तुम?"
"यहीं।"

बस यूँ ही कई देर चलता रहा। अंत में मैडम ने कहा —
"कोई आस-पास है तो उसे फ़ोन दो।"

मज़दूर ने कहा — "साब, आप बता दो हम कहाँ पर हैं।"
उधर से दो लोग गुज़र रहे थे।
उन्होंने कहा — "मैडम, ये दूसरे वाले ट्यूबवेल पर खड़ा है। आप दूसरे ट्यूबवेल पर हैं।"

"अच्छा, इसे कहो वहीं रुके। मैं दस मिनट में पहुँच जाऊँगी, नहीं तो वो कहीं और पहुँच जाएगा।"

मज़दूर और बच्चा दोनों खड़े रहे।
धूल उड़ाती सड़क पर एक सुंदर गाड़ी आकर रुकी, और एक सुंदर सी लड़की उतरी।
"तुम ही हो जिसे बच्चे का एडमिशन करवाना है?"
"जी जी।" उसकी आँखें आश्चर्य से फैल गईं।
"आप कौन हैं?"
"मैं वही हूँ जिससे तुमने बात की थी। तुम मेरे पीछे-पीछे स्कूल तक आओ।"

और फिर शुरू हो गया दिलख़ुश का स्कूल।

मज़दूर मायूस-सा होकर कहने लगा —

“यह कभी स्कूल नहीं गया। अब मैं इसे पढ़ाना चाहता हूँ, लेकिन सब ‘ना’ कह रहे हैं। अब आप ही मेरी आख़िरी उम्मीद हैं। मैं बहुत आशा के साथ आपके पास आया हूँ।”

“तुम चिंता मत करो। अभी तुम इसे यहाँ छोड़ दो। जो भी ज़रूरत होगी, तुम्हें हम बता देंगे। बच्चे का नाम क्या है?”

“जी, दिलख़ुश।”

“अब तुम अपनी दिहाड़ी पर जाओ और दिलख़ुश की चिंता हम पर छोड़ दो। छुट्टी के बाद मैं तुम्हारे कमरे पर आऊँगी। कहाँ रहते हो?”

“जी, नर्सरी में रहता हूँ, जहाँ पेड़-पौधे उगाए जाते हैं। वहीं एक छोटा कमरा है, वहीं रहता हूँ।”

“हाँ, मैं जानती हूँ। मैं दिलख़ुश को लेकर छुट्टी के बाद तुम्हारे कमरे पर आऊँगी। मुझे दिलख़ुश की पूरी जानकारी चाहिए।”

दिलख़ुश अनजान बच्चों के बीच हैरान-परेशान-सा एक कोने में खड़ा था।
“ये तो जेल जैसा लग रहा है... मैं कहाँ फँस गया?”
उसकी आँखों में आँसू तैरने लगे।

सारे बच्चे क्लास में पढ़ रहे थे। कहीं गणित, कहीं हिंदी, कहीं इंग्लिश की क्लास चल रही थी।
दिलख़ुश को ऐसा महसूस हो रहा था कि जैसे उसे किसी बड़े विदेशी स्कूल में दाख़िला दिला दिया गया हो।।

कक्षा 6 में उसे बैठा दिया गया।
उसके आगे सब कुछ नया माहौल था।
टीचर ने बच्चों से परिचय करवाया —
“यह बच्चों, तुम्हारा नया साथी है। अब से यह तुम्हारे साथ ही पढ़ेगा।”

लेकिन सभी बच्चे उसकी पोशाक तथा सिर की चोटी देखकर हँस पड़े।
“अरे, हमारी कक्षा में चोटी वाला पंडित आ गया है।”
शिक्षिका ने सभी को डाँटकर चुप कराया और सख़्त लहजे में बोलीं —
“सभी बच्चे इसकी पढ़ाई में मदद करेंगे।”

“लेकिन मैम, ये तो बात भी नहीं कर रहा, बैठ भी नहीं रहा।”
“दिलख़ुश, बैठ जाओ।”

वह अपनी सीट पर बैठ गया।
लेकिन जैसे ही मैडम पढ़ाने लगीं, फिर से दिलख़ुश अपनी जगह से उठकर नीचे एक कोने में ज़मीन पर बैठ गया।
फिर खड़ा हो गया। उसे समझ में ही नहीं आ रहा था कि क्लास क्या होती है।

उसकी माँ ने उसके हाथ में एक थैला पकड़ा दिया था।
वह उसे बार-बार खोलकर देख रहा था।

मैडम क्लास में बोलीं — "ओपेन द बुक।"
सभी बच्चे फटाफट किताबें खोल रहे थे। सभी पढ़ने को तैयार थे।
पर दिलख़ुश आख़िर करे तो क्या? वह नज़ारा देखता रह गया।

घंटी बजते ही मैडम क्लास से बाहर चली गईं और बच्चों की छोटी-छोटी शैतानियाँ शुरू हो गईं।
मैडम के आते ही क्लास फिर से चुप।

लास्ट पीरियड तक दिलख़ुश को केवल तब मज़ा आया जब बच्चे आपस में शैतानियाँ कर रहे थे।
तब उसकी आँखों में चमक आ जाती —
"ये काम तो मुझे आता है... ये बच्चे अलग नहीं हैं।"

लेकिन आख़िरी तक वह खड़ा ही रहा, कोने में एकदम चुपचाप।
उसे एक बात भी समझ में नहीं आ रही थी।

उसके मन में सवाल उठ रहा था —
"मुझे आख़िर कहाँ फँसा दिया है? मैं यहाँ कैसे रहूँगा और क्या करूँगा...?"

"हे ईश्वर, यहाँ से निकलने का कोई रास्ता सुझा।"
बार-बार ग़ुस्से से उसकी मुट्ठी कस जाती और फिर आख़िर में छुट्टी की घंटी बजी।
सभी बच्चे बाहर निकलने लगे। दिलख़ुश भी पीछे-पीछे हो लिया और जल्दी से बाहर निकलने लगा।
तभी पीछे से मैडम की आवाज़ सुनाई दी। —
"दिलख़ुश, रुको। तुम्हें मीटिंग के बाद मेरे साथ जाना है। तुम बाहर रुको, हम आते हैं।"

और फिर चला दिलख़ुश के एडमिशन का लम्बा डिस्कशन।

"मैडम, दिलख़ुश को तो अक्षर पहचानना भी नहीं आता और आप उसे कक्षा 6 में रखने की बात कर रही हैं।
उसे ना तो गिनती आती है, ना तो अ-आ, इ-ई आती है और ना ही ABCD।
और तो और, उसे क्लास में कैसे बैठना है यह तक नहीं आता।
हम और बच्चों का कोर्स कैसे चलाएँगे? इससे अच्छा है, कक्षा 6 को फ़र्स्ट की क्लास बना दो"
" इतने बड़े सवाल कैसे करेगा जब गिनती ही नहीं आती?
और तो और, सबसे बड़ी चुनौती तो इंग्लिश का कोर्स है — बच्चा उसे कैसे संभालेगा??
आप इसे कक्षा 6 में कैसे एडमिशन दिला सकती हो?
इससे तो अच्छे बच्चों की पढ़ाई भी ख़राब हो जाएगी और उनको पढ़ाना भी मुश्किल हो जाएगा।"

"एक बार एडमिशन होने पर हम इस बच्चे को फ़ेल भी नहीं कर सकते।
तो फिर ये बच्चा कक्षा 6 में कैसे पढ़ सकता है?"
"हम कोर्स पूरा करें या इसे अक्षर ज्ञान करवाएँ?"
अन्य सभी शिक्षिकाएँ अपनी-अपनी परेशानियाँ बता रही थीं।

सभी शिक्षक अपने-अपने तर्क दे रहे थे —
"इस दिलख़ुश नाम के बच्चे को उन बच्चों के साथ कैसे पढ़ा सकते हैं, जो पिछले पाँच सालों से पढ़ रहे हैं?
उनके साथ यह बच्चा, जो कभी भी स्कूल ना गया हो, कैसे पढ़ सकता है?
बहुत ही अन्य दिक़्क़तें आएँगी जिससे और बच्चों की पढ़ाई पर भी असर पड़ेगा।"

एक-दो शिक्षिकाएँ तो मीटिंग छोड़ने तक को तैयार हो गईं।
काफी समझाने-बुझाने और मनाने के बाद ही सभी एक साथ बैठ पाए और चर्चा जारी रही

आख़िर में नीलिमा मैडम ने, जो दिलख़ुश को स्कूल लेकर आई थीं, अपनी चुप्पी तोड़ते हुए कहा। उनकी
आवाज़ में थकान भी थी और दृढ़ता भी —
"क्या ऐसे बच्चे को पढ़ाई का कोई अधिकार नहीं है, जो अब तक कभी स्कूल नहीं गया?
जिसके माँ-बाप ख़ुद अनपढ़ हैं, जिनके घरों में कभी किताब की जगह बस मेहनत का बोझ रहा है?
जिनके लिए स्कूल अब भी किसी अमीर के आँगन जैसा लगता है, जहाँ वे सिर्फ़ झाड़ू लगाने या दरवाज़ा खटखटाने जा सकते हैं, पढ़ने नहीं।

हम सब जानते हैं, यही सोच सबसे बड़ी दीवार है।
पीढ़ियों तक जो लोग खेतों में या दिहाड़ी मज़दूरी में जुटे रहे, उनकी समझ में पढ़ाई का मतलब ही कभी समझाया नहीं गया।

और अब, जब वही माता-पिता पहली बार अपने बच्चे को स्कूल भेजना चाहते हैं तो क्या हम, जो शिक्षक हैं, उन्हें रोकें या अपनाएँ?"
वो थोड़ी देर के लिए रुकीं, फिर आगे बोलीं —
"हमारे संविधान ने, हमारे देश ने, इन्हीं बच्चों के लिए **'शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE)'** बनाया है।

जिसमें साफ़ लिखा है कि छह से चौदह वर्ष तक की आयु के हर बच्चे को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार है।
अगर कोई बच्चा कभी स्कूल नहीं गया हो, तो उसे उसकी आयु के अनुसार उचित कक्षा में प्रवेश दिया जाए और उसे बाक़ी बच्चों की बराबरी तक लाने के लिए विशेष प्रशिक्षण दिया जाए

क्योंकि शिक्षा कोई इनाम नहीं, यह हक़ है।"
नीलिमा अब सबकी ओर देख रही थीं —
"हाँ, मुश्किलें आएँगी।
कभी हँसी बनेगी, कभी शिकायतें होंगी, पर अगर हम नहीं सिखाएँगे तो कौन सिखाएगा?
हमें बच्चों के साथ मिलकर, उनके भीतर की उस रोशनी को पहचानना होगा, जो बस एक चिंगारी के इंतज़ार में है।

क्योंकि अगर एक दिलख़ुश पढ़ लेता है, तो उसके साथ पूरा घर, पूरा गाँव रोशनी में आ जाता है।"

सभी शिक्षकों ने बहुत भारी दिल से हामी भरी और मिलकर अपने-अपने तरीक़ों से दिलख़ुश को पढ़ाने के विषय में सोचने लगे।
और इसी के साथ मीटिंग का अंत एक सकारात्मक दृष्टिकोण के साथ बदल गया।

नीलिमा दिलख़ुश को अपनी गाड़ी में बैठाकर उसके घर की ओर चल पड़ी।
दिलख़ुश गाड़ी में बैठकर अनोखा अनुभव कर रहा था — जैसे वह परियों के देश में उड़ रहा हो।
"अरे वाह, इतनी सुंदर ड्राइवर कभी देखी ही नहीं।"

उसका दिमाग़ हवाओं से बातें करने लगा और वह पीछे की सीट पर अपने दोनों पाँव ऊपर करके बैठ गया।

गर्दन बाहर निकालकर देखने लगा।
नीलिमा की नज़र जैसे ही पीछे पड़ी, ज़ोर की आवाज़ के साथ बोली —
"पैर नीचे करो, गर्दन अंदर रखो, हाथ अंदर रखो।"

वो बेचारा सहम गया और चुपचाप बैठ गया।

"धत्त! यहाँ तो अपनी मर्ज़ी से बैठ भी नहीं सकते। इससे अच्छा तो अपना गाँव ही था।
अपनी मर्ज़ी से कहीं भी आ-जा सकते थे।
इस कार से तो अपनी भैंस की सवारी लाख गुना अच्छी थी।"

बार-बार दिलख़ुश के चेहरे पर अनेक भाव आ रहे थे।
मुट्ठियाँ भींच रही थीं, पैर मुश्किल से एक जगह टिक रहे थे।

"काश, मेरी भैंस इस वक़्त होती तो मैं, छोटू, सुरेश, रोहित, पप्पू और राजू अपनी-अपनी भैंसों पर बैठकर कैसी सवारी करते।"
और वह कुछ देर के लिए अपनी पुरानी दुनिया में खो गया।

उसको गाड़ियों के हॉर्न सीटियों जैसे सुनायी दे रहे थे। गाड़ियों की आवाज़ भैंसों की आवाज़ के जैसे लग रहीं थी।
दिलख़ुश भी सीटी बजाने लगा।
उसके चेहरे और आँखों में चमक आ गई।
गाड़ी की जगह उसे भैंस की सवारी का मज़ा आने लगा।
"वाह, क्या मज़ा आ रहा है पप्पू।"

दिलख़ुश को लग रहा था कि वह किसी देश का राजा हो और दोस्त उसके सिपाही, नौकर, प्रजा।
धीरे-धीरे जंगलों से होता हुआ उसका क़ाफ़िला नदी की ओर बढ़ रहा था।
भैंसें आधी-आधी पानी में डूब गईं।
दिलख़ुश के पैरों को पानी छूने लगा और उसने भैंस की पीठ से पानी में छलाँग लगा दी।
वह तैरने लगा।

फिर जो सभी सामान साथ में लाए थे, उनसे मछली पकड़ने लगे।
काँटा डालकर, पत्थर मारकर मछलियाँ पकड़ने लगे।

उन्हें पता लग गया था कि पत्थरों पर ज़ोर से मारने से मछलियाँ मर जाती हैं और तैरकर उलटी हुई मछलियों को पकड़ सकते हैं।

एक भी मछली दिखती, तो पाँचों एक साथ कूद पड़ते। वह मछली उनसे बचकर निकल जाए, यह नामुमकिन था।
छोटू किनारे बैठा मछलियाँ अपनी आधी-अधूरी शर्ट में इकट्ठा कर रहा था।

आख़िरकार मछली पकाने का समय आ गया।
सभी ने जल्दी-जल्दी लकड़ियाँ इकट्ठी कीं।
पैंट की जेब से माचिस निकालकर आग जला दी और एक-एक मछली को भूनकर खाने लगे।

जैसे ही दिलख़ुश ने मछली निगली, गाड़ी रुकी।
नीलिमा ने देखा कि दिलख़ुश दोनों सीटों के नीचे बैठा है और हँसने लगी।
"उतरो साहब, तुम्हारा घर आ गया।"

दिलख़ुश चौंक गया।
"मैं कहाँ आ गया?"
वह कूदकर उतरा और उछलकर अपने एकमात्र कमरे में चला गया।

दिलख़ुश की माँ, बड़ी बहन और जीजाजी ने कहा —
"नमस्ते मैडम जी।"

अंदर देखा तो एक ईंटों से बना कच्चा कमरा था। छत में काली पॉलीथिन लगी थी। दो-तीन बर्तन थे और दरी में लपेटा हुआ बिस्तर। एक झूलती हुई रस्सी थी जिसपर कपड़े टंगे थे।
लकड़ियाँ जल रही थीं और उस पर एक भगोना रखा था। पानी के लिए एक रंग की बाल्टी रखी थी। बस यही था उनका घर।

"मैडम जी, आप कहाँ बैठेंगी? हमारे पास कुर्सी भी नहीं है।"

"कोई बात नहीं, यही दीवार पर बैठ जाते हैं। अब बताओ, थोड़ा विस्तार से दिलख़ुश के विषय में। जितना जान सकें, उतना अच्छा रहेगा ताकि उसकी पढ़ाई उसी ढंग से कराई जा सके।
दिलख़ुश के कितने भाई-बहन हैं? यह स्कूल क्यों नहीं गया और घर में क्या-क्या काम करता था?"
"मैडम जी, मैं दिलख़ुश का जीजा हूँ। इससे पहले इसकी पाँच बड़ी बहनें हैं। यह बहुत मुश्किलों से पैदा हुआ।

इसे बचपन से ही लाड़-प्यार के कारण स्कूल नहीं भेजा गया।"

"अचानक ऐसा क्या हुआ कि तुमने इसे स्कूल में पढ़ाने का निर्णय लिया?"

"मैडम जी, मेरी शादी से पहले क्यों स्कूल नहीं गया यह तो माता जी बताएँगी।
परंतु मेरी शादी के बाद जब मैं पहली बार इनके घर गया, तो हालात बहुत ख़राब थे।

मेरे ससुर (दिलख़ुश के पिता) बीमार हैं और बिस्तर पर हैं। गाँव में कमाई का कोई साधन नहीं है।
महीने में एक-आध बार ज़मींदार या ठेकेदार बुला लेते हैं। उसी से ख़र्चा चलता है।

मेरे ससुर की बीमारी और ग़रीबी के कारण क़र्ज़ा लिया हुआ है।
कर्ज़े के कारण जो थोड़े बहुत खेत हैं, वो गिरवी रखे पड़े हैं। इसलिए मैंने सोचा कि मैं भी पढ़ा-लिखा नहीं हूँ।
अगर बड़ा मिस्त्री या मैकेनिक या ड्राइवर बनना है तो अक्षर ज्ञान ज़रूरी है।
कहीं कुछ लिखा हो और वह न पढ़ सके तो कोई भी काम, यहाँ तक कि सिलाई भी, नहीं कर पाएगा।
तो मैंने प्रण किया कि चाहे कुछ भी हो, मैं दिलख़ुश को अक्षर ज्ञान करवाऊँगा।

ये इसकी बड़ी बहन है जो मेरी पत्नी है और ये माताजी हैं।
हम तीनों दिहाड़ी मज़दूरी का काम करते हैं। घर का ख़र्च और क़र्ज़ा चुकाने के लिए हर महीने पैसे भेजते हैं।

बाक़ी घर पर सब ससुर जी के साथ हैं।
हम यहाँ 500 रुपए महीने किराए पर रहते हैं।
हम परदेस आए हैं पैसा कमाने और दिलख़ुश को पढ़ाने। बस। बाक़ी माताजी बताएँगी।"

दिलख़ुश की माँ, जो बेटे के एडमिशन से बहुत ख़ुश थी, बोलीं —
"मैडम जी, आपका भला हो। जब दिलख़ुश पैदा हुआ तो मैं बेटे होने की उम्मीद छोड़ चुकी थी।
पाँच बेटियों के बाद ताने सुन-सुन कर परेशान हो चुकी थी।
पर जब दिलख़ुश पैदा हुआ तो मैं बहुत ख़ुश हो गई।

और पता ही नहीं चला कि कब ये पाँच-छह साल का हो गया और इसके बाबूजी बीमार होकर बिस्तर पकड़ लिए। बहुत मुश्किल से दो वक्त की रोटी जुट पाती थी।" और वह उन समय के दुखों में डूब गई और बोलती गई।

मिट्टी का घर था, आँगन में बंधी भैंस और एक आम का पेड़।
फ़िक्र के मारे सुशीला (दिलख़ुश की माँ) रात भर सो नहीं पाई कि सुबह बच्चे और पति क्या खाएँगे।
उजाला होते ही ज़मींदार के द्वार पर जा पहुँची।
वो अभी उठकर बाहर ही निकले थे कि उनकी नज़र सुशीला पर पड़ी।
"अच्छा किया तुमने जो यहाँ आ गई। आज हमारे बेटे का जन्मदिन है। घर में बहुत काम है।
हम तुम्हें बुलाने ही भेज रहे थे, तुम ख़ुद ही आ गई।"

दिन भर पंडित, पूजा, वग़ैरह और अनेक प्रकार के खाने बन गए।
सबसे पहले बच्चे की नज़र उतारी गई।
"सुशीला ओ सुशीला।"
सुशीला दौड़ती हुई आयी और सबने बच्चे की नज़र उतारकर पैसे सुशीला को दे दिए।
सबके खाना खाते ही बहुत सारा खाना और पैसे लेकर सुशीला घर की ओर दौड़ पड़ी।

घर पर सब उदास और भूखे बैठे थे। चाय-दूध पी रहे थे।
जैसे ही सुशीला ने खाने की पोटली खोली, लगा जैसे दिवाली आ गई हो। सबके उदास चेहरे खिल पड़े।

काम का सिलसिला शुरू हो गया लेकिन बहुत कम पैसे मिलते थे। दूर-दूर तक कोई काम नहीं।
मजबूरी में कम से कम पैसों में काम करना पड़ता।

"दिलख़ुश की पढ़ाई की चिंता तो तब होती, पहले पेट भरने की चिंता।"
धीरे-धीरे दिलख़ुश गाँव के सबसे शैतान बच्चों में नम्बर वन में गिना जाने लगा।
"मैं सुबह 6 बजे से रात को ही घर आती थी।"

दिलख़ुश अनोखा। न पढ़ाई की फ़िकर, न सफ़ाई की। न नहाना, न चप्पल पहनना।
शर्ट के आधे बटन टूटे हुए।
बाल न कंघी करने की फ़ुर्सत, न कटवाने के पैसे।
बाल धूप में घूम-घूम कर ब्राउन हो गए थे।
बड़ी आँखें और त्वचा काली चमकीली।
स्वच्छ हवा, न डाँट, न फ़िक्र, न घर आने की चिंता, न जाने की।
दिन भर जंगलों में घूमना और पेड़ों में रहना।
पक्षी, बंदर, जानवर, सब साथी।

एक दिन तो हद हो गई। दिलख़ुश दिन में दबे पाँव घर के अंदर दाख़िल हुआ और चुपचाप चादर ओढ़कर सो गया। सभी बड़े आश्चर्य में —
"आज घर के अंदर दिन में कुछ तो बात है।"
लेकिन देखा तो सब शांत था। दिलख़ुश चादर ओढ़कर सो रहा था।

बहनों ने जैसे ही चादर उठाई, उसके अंदर से बंदर का बच्चा खी-खी दाँत निकालकर उन पर चिपटने लगा और सब भाग गए।

"पिताजी, दिलख़ुश बंदर का बच्चा लाया है।"

पिता ने भी दिलख़ुश को ख़ूब डाँट लगाई।
लेकिन दिलख़ुश बंदर को छोड़ने को तैयार नहीं और बंदर भी उसे छोड़ने को तैयार नहीं, क्योंकि दोनों दोस्त बन गए थे।

दिलख़ुश बंदर को गुदगुदी करता तो बंदर खी-खी दाँत निकालकर हँसता। कभी-कभी बंदर उसके सिर में जूँ खोजने लगता। पाँचों बहनें बड़े आश्चर्य से देख रही थीं और माँ के आने का इंतज़ार कर रही थीं। सभी माँ से शिकायत करने के लिए बेताब थीं।

अँधेरा हो गया। माँ जल्दी से कमरे में दाख़िल हो रही थी और पाँचों बहनें बाहर खड़ी थीं।
छोटी बहन बोली —
"माँ, माँ, आज दिलख़ुश एक बंदर लाया है और वह हमें काटने आ रहा है। वह उसे छोड़ भी नहीं रहा।"

"आज तो मैं इसे सबक़ सिखाकर ही रहूँगी।"

आँगन से एक डंडी उठाकर ग़ुस्से में गई और धड़ाधड़ वार करने लगी।
लेकिन बंदर माँ की धोती पकड़कर चिपट गया और डंडी वाला हाथ भी पकड़ लिया।
जब तक डंडी हाथ से गिरी नहीं, वह माँ के हाथ पर झूलता रहा। माँ भी डर के मारे पीछे हट गई।
क्या करें, बंदर भी दिलख़ुश का पूरा बचाव कर रहा था।

फिर खाने की बारी आई। दिलख़ुश की थाली कमरे में ही दे दी गई। बंदर और दिलख़ुश मज़े से एक-दूसरे को खाना खिलाने लगे। धीरे-धीरे बंदर रोज़ आने लगा और घर के सभी सदस्यों को पहचानने लगा।

"इसी तरीक़े से दिन गुज़रते गए और मेरी बड़ी बेटी की शादी हो गई।"

दामाद जी घर पर आए।
सब लोग उनकी ख़ातिरदारी में लग गए।
चारों बहनें, माँ-पिता सब दामाद से मिले।

अंत में दामाद जी बोले —
"साले साहब कहाँ हैं?"

सारे घर में ढूँढा गया। दिलख़ुश पलंग के नीचे छुपा था। बहुत बुलाया गया लेकिन वह बाहर नहीं निकला।

आख़िरकार थक कर दामाद के लाए गुलाबजामुन का डब्बा देखकर सबके मुँह में पानी आ रहा था कि डब्बा कब खुले और हम कब खाएँ। ज़िंदगी में पहली बार गुलाबजामुन खाने को मिला।

सबको गुलाबजामुन खाने को मिला और दिलख़ुश ने पलंग के नीचे से हाथ लम्बा किया और गुलाबजामुन ले लिया। धीरे-धीरे गुलाबजामुन चाटने लगा। खाना खाने के लिए बुलाया गया लेकिन वह नहीं आया।

उसे तो अनोखा स्वाद मिल गया था। वह धीरे-धीरे गुलाबजामुन चाट रहा था ताकि ख़त्म न हो। धीरे-धीरे पलंग के नीचे ही सो गया।
गुलाबजामुन उसके हाथ में वैसे ही रह गया।

सुबह जैसे ही नींद खुली, तो पूरा हाथ चींटियों से भरा पड़ा था। दिलख़ुश की तो दुनिया ही लूट गई। गुलाबजामुन तो चींटियों ने खा लिया।

बड़ी-बड़ी आँखों से आँसू लुढ़क पड़े।
"ये क्या हुआ? इतनी मुश्किल से बचाया था। ऐसा जानता तो पूरा का पूरा एक बार में निगल जाता। काश मैंने खा लिया होता!"
उसकी लाचारी वैसी थी जैसे किसी राजा की सल्तनत एक ही रात में उजड़ गई हो।

"फिर दामाद जी हमें रुपए कमाने और दिलख़ुश को पढ़ाने के लिए परदेस ले आए।"

"अच्छा, मैं चलती हूँ।"

नीलिमा यह कहते हुए उठ गई और निकलते हुए बोली —
"कल से इसे स्कूल भेजना शुरू करिए।"

पहला दिन। सुबह प्रार्थना का समय।
उसी वक़्त दिलख़ुश को विद्यालय छोड़कर उसके जीजा जी मज़दूरी पर चले गए।

बच्चे जल्दी-जल्दी लाइन में खड़े हो गए और दिलख़ुश एक जगह पर खंभे की तरह खड़ा हो गया और पैरों से ज़मीन खुरचने लगा। सभी बच्चे लाइन में खड़े हो गए और टीचर्स भी। प्रार्थना हो रही थी लेकिन दिलख़ुश एकदम बुत की तरह शांत खड़ा था।

फिर आई कक्षा 6 की बारी। हिंदी टीचर क्लास में गईं और पढ़ाना शुरू किया। सभी टीचर्स के लिए यह एक चैलेंज हो गया था कि दिलख़ुश को पढ़ाना ही है।

मैडम ने सबसे पहले दिलख़ुश को बुलाया और कापी और पेंसिल देकर कहा —
"जो भी तुम्हें आता है, इसमें बनाओ।"

वह कभी गोल, कभी टेढ़ी-मेढ़ी आकृतियाँ बना रहा था।
एक हफ़्ते तक सारे टीचर्स ने उसे पेंसिल पकड़ना, बैठना और जो भी आकृति या डिज़ाइन वह बना सकता था, उसे बनाने को दिया। लेकिन जैसे ही टीचर्स की नज़र हटती और वे ब्लैकबोर्ड पर कुछ लिखने लगते, तो दिलख़ुश खड़ा हो जाता और इधर-उधर घूमने लगता, जैसे जंगल में घूम रहा हो। कुर्सी से पलटी मारकर छलाँग लगा लेता।

कुछ तो उसे इस बार-बार के घूमने और दौड़ने की आदत से 'दौड़ भाई' पुकारने लगे थे।

धीरे-धीरे शिक्षकों के अथक प्रयास से दिलख़ुश अक्षर पहचानना सीख गया।
सबके सब टीचर्स क्लास में घुसते ही उसका होमवर्क देखते और आगे उसे क्या करना है बताते।
फिर एक शब्द पहचानने पर शाबाशी देते।

अन्य बच्चे इस बात से जलने लगे।
बच्चे आपस में खुसर-फुसर करने लगे —
"हम तो पूरा उत्तर सही भी सुना दें, तब भी इतनी शाबाशी नहीं मिलती जितनी इसे अ-आ पहचानने पर मिलती है।"

इस बात से बच्चे उसके प्रति खीझ और जलन महसूस करने लगे। जैसे ही नीलिमा को यह ख़बर मिली तो वह कक्षा में आकर सारे बच्चों को प्यार से समझाने लगीं।

"जो तुम लोग सात साल पढ़कर छठी में आए हो और तुमने नर्सरी, LKG, UKG और फिर फ़र्स्ट से फ़िफ़्थ तक पढ़ा है। इन सात सालों की पढ़ाई दिलख़ुश को एक साल के भीतर करके दिखाना है।

क्योंकि दिलख़ुश कभी स्कूल नहीं गया और ना ही कभी किसी ने उसे पढ़ना-लिखना सिखाया।

इसलिए पूरी क्लास को इसकी मदद करनी पड़ेगी।"

कुछ बच्चे इस बात से दुखी थे कि यह कभी स्कूल नहीं गया और इसे कुछ पढ़ना-लिखना नहीं आता।

लेकिन वही कुछ बच्चों को ईर्ष्या हो रही थी कि इसे न कभी होमवर्क करना पड़ा होगा, न सुबह उठना पड़ा होगा, न टीचर्स से और न ही मम्मी-पापा से डाँट खानी पड़ी होगी, न ही इसे दिनभर स्कूल में रहना पड़ा होगा।

आपस में अलग-अलग बातें हो रही थीं।

अंत में यह निष्कर्ष निकला कि दिलख़ुश के अभी तक स्कूल न जाने से अधिकतर बच्चे ईर्ष्या कर रहे थे कि हमें इतने सालों बाद छठी क्लास मिली और यह सीधे भर्ती होते ही छठी में।

"यहीं अच्छा है। पहले ख़ूब मज़े करो और फिर सीधे छठी में आ जाओ।"

वहीं इसके ठीक विपरीत दिलख़ुश क्लास के अन्य बच्चों को देखकर सीट पर बैठ तो जाता था, मगर उठकर इधर-उधर घूमने लगता था।
टीचर डाँटकर उसे बैठातीं और ध्यान बँटाने के लिए छोटे-छोटे काम या ड्रॉइंग बनाने को देतीं।

सारे टीचर्स का मुख्य आकर्षण दिलख़ुश हो गया था।

शुरू में तो जब पूछा जाता — "तुम्हारा नाम क्या है?"
तो दिलख़ुश सीधे टेबल के नीचे बैठ जाता और बाहर निकलने का नाम ही नहीं लेता था।
और फिर 10-15 मिनट बाद बाहर फ़ील्ड में घूमने लगता।

कभी पत्थर उठाकर खेलता और जो भी फ़ील्ड में होता, उसे ज़ोर-ज़ोर से पैरों से इधर-उधर मारता।

नीलिमा क्लास में आयीं। सभी बच्चे बोले — "गुड मॉर्निंग मैम।"
"गुड मॉर्निंग चिल्ड्रेन।"

लेकिन दिलख़ुश गर्दन झुकाए, कनखियों से चुपचाप देख रहा था कि यह आख़िर हो क्या रहा है।
साथ में उसे बहुत ज़ोर की पेशाब भी आ रही थी।
लेकिन वह कहाँ जाए, क्या बोले, क्योंकि अभी तक वह कुछ नहीं बोला था।

फिर शायद बग़ल वाला बच्चा समझ गया और उसने मैडम से कहा —
"मैम, दिलख़ुश को बाथरूम जाना है।"
"जाओ, तुम इसे बाथरूम तक छोड़ आओ।"
"जी मैम।"

दिलख़ुश बाथरूम तो गया, पर करे कहाँ।
उसने तो बाथरूम कभी यूज़ ही नहीं किया था।

"भई, कहाँ पेशाब करूँ? यह तो कमरा है, कमरे में कैसे करूँ?"
"क्यों, कहाँ जाएगा? यही तो बाथरूम है।"
"नहीं, हम नहीं करेंगे यहाँ। चलो, मैं बताता हूँ, पेशाब कहाँ करते हैं।"

दिलख़ुश दौड़ता हुआ बिल्डिंग के पीछे दीवार के पास गया और दीवार पर चढ़कर बोला —
"यहाँ आ जा। यहाँ दीवार पर चढ़कर दोनों पेशाब करेंगे। मैं तो ऐसे ही करता हूँ।"

धीरे-धीरे एक-दूसरे को देखकर सारे बच्चे दीवार पर चढ़ गए।
एक-एक करके सबने एक-दूसरे को ऊपर खींचा और सब उत्सुकता में देखने लगे कि अब आगे क्या होगा।

दिलख़ुश कहने लगा —
"जिसका पेशाब सबसे दूर जाएगा, वही फ़र्सट आएगा।"

सभी खड़े होकर लाइन से पेशाब करने लगे और यह भी देखने लगे कि दूर तक कौन पेशाब करेगा।
और देखते-देखते यह एक खेल हो गया।

सभी बच्चे लाइन से दीवार पर खड़े हो गए और फिर अगला चैलेंज शुरू हुआ दिलख़ुश का।

"जितनी दूर तक जिसका पेशाब गया है, उसे दीवार से उतनी दूर छलाँग लगानी है।
जो पूरा कूद जाएगा, वह यह खेल जीत जाएगा।"

"कहाँ हैं सारे बच्चे?"
पीछे से टीचर्स की आवाज़ आयी।

कुछ अंदर कूद गए, कुछ रोने लगे।
लेकिन दिलख़ुश लंबी छलाँग लगाकर बाहर कूद गया और एक मिनट में पूरी दीवार का चक्कर लगाकर अंदर भी आ गया। कुछ बच्चे दीवार पर ही डर के मारे रो रहे थे।

किसी तरह से सारे बच्चों को टीचर्स की मदद से नीचे उतारा गया और फिर अंदर सबको डाँट पड़ी।
सभी बच्चों से पूछा गया —
"यह हरकत किसकी थी?"

स्टाफ़ तक यह बात पहुँच गई कि यह शुरुआत दिलख़ुश के द्वारा की गई।
माधुरी मैम स्टाफ़ रूम में घुसने से पहले ही शुरू हो गईं।
अपना चशमा हाथों से ठीक करते हुए बोलीं —
"मैंने तो पहले ही कहा था इसे यहाँ एडमिशन मत दिलाओ।
बच्चों के पढ़ने की बजाय हमारे बच्चे रोज़-रोज़ गंदी हरकतें सीख रहे हैं।
यह तो हमारी इतने सालों की मेहनत पर पानी फेर देगा।
वह दिन दूर नहीं जब पुलिस और मीडिया दोनों जगह हमारा नाम आएगा।"

"कोई बच्चा दीवार से गिर जाता, कुछ भी हो सकता था।
बच्चों के माता-पिता तो यही कहते कि सारी ग़लती टीचर्स की थी।
मैम, आप अभी के अभी इस दिलख़ुश की टीसी इसके घरवालों को सौंप दो।"

"दिलख़ुश को सिखाना तो ठीक है, पर अन्य बच्चों का भविष्य भी तो दाँव पर नहीं लगाया जा सकता।
कहीं ऐसा न हो कि एक बच्चे के चक्कर में सारे बच्चों का भविष्य भी ख़तरे में पड़ जाए।"

सारा स्टाफ़ अब माधुरी मैम के साथ था।
सभी डरे हुए थे।
कुसुम मैम धीरे से बोल पड़ीं —
"इसे पढ़ाने के चक्कर में हम कहीं और न पहुँच जाएँ।"

नीलिमा एकदम गुमसुम, आँखें नीचे किए हुए, जैसे अपराध उसी से हुआ हो।
वह शायद गहरी सोच में डूबी थी।

"मैम, थोड़ा-बहुत हमें अनदेखा करना पड़ेगा।
प्लीज़, इस बात को मत बढ़ाइए। इसे यहीं ख़त्म करिए।
मैं माफ़ी माँगती हूँ बच्चों की ओर से।

और रही बात दीवार पर चढ़कर पेशाब करने वाली, तो हमें यह सिखाना पड़ेगा दिलख़ुश को कि कहाँ क्या करना है। एकदम से तो वह अनुशासन नहीं सीख पाएगा।"

थोड़ी गरमा-गरमी के बाद बात समाप्त हो गई। सभी अपनी-अपनी क्लास में चले गए। लेकिन नीलिमा दिलख़ुश की दीवार से लंबी छलाँग को किसी और संदर्भ से जोड़ रही थी। गेम्स भी होने वाले थे।

तभी फिर से आपातकालीन मीटिंग। सारा स्टाफ़ इकट्ठा और मुद्दा सिर्फ़ एक — दिलख़ुश।

"मैम, ऐसा ही चलता रहा तो वो दिन दूर नहीं जब हमारा स्कूल बंद हो जाएगा।"
" माता-पिता बच्चों को स्कूल में अनुशासन और पढ़ाई करने के लिए भेजते हैं, न कि उल्टी-सीधी हरकतें सिखाने।"

तभी बहुत देर से बीना मैम चुप बैठी हुई बोलीं —
"नहीं।"

अपने चश्मे को ठीक करती हुई, "अब तो विद्यालय में या तो दिलख़ुश ही पढ़ेगा या अन्य बच्चे।
मैंने तो पहले ही मना किया था कि इसे एडमिशन मत दो।
कम से कम यह मुसीबत तो न झेलनी पड़ती।
नीलिमा मैम, बताइए आपके पास इसका क्या इलाज है?"

लेकिन नीलिमा अन्य ही विचारों में खोई हुई मुस्कुराते हुए बोलीं —
"समय तो लगेगा। हमें थोड़ा धैर्य रखना पड़ेगा।"

सभी एक साथ बोल पड़े —
"और कितना धैर्य रखें? हर वक़्त यही बात... बहुत मुश्किल है अब।"

लेकिन नीलिमा भी कहाँ हारने वाली थी। उसने सभी टीचर्स से विनती की —
"थोड़ा-बहुत तो बच्चा हरकत करेगा ही।
हमें समझना पड़ेगा। कभी स्कूल गया ही नहीं, तो धीरे-धीरे हमें सभी को कोशिश करनी पड़ेगी। अच्छा मैम, मेरा पीरियड शुरू होने वाला है।"
यह कहकर नीलिमा क्लास में चली गई।

धीरे-धीरे सब सामान्य होने लगा।
लेकिन दिलख़ुश अब भी अपनी ऊटपटाँग हरकतों से बाज़ नहीं आता।
कभी चलते-चलते छलाँग लगा देता, कुर्सी पर न बैठता, क्लास में खड़ा रहता, कहीं भी उठकर चल देता।

सभी टीचर्स परेशान कि पढ़ाएँ तो तब जब क्लास में बैठना सीखे।
लेकिन नीलिमा के दिमाग़ में हर वक़्त यही चल रहा था कि इतनी बड़ी छलाँग कोई बच्चा कैसे मार सकता है।

और फिर कक्षाएँ शुरू। टीचर क्लास में घुसीं और मैथ्स के सवाल कराने लगीं।
दिलख़ुश को "वन, टू, थ्री" लिखने को कहा।

लेकिन दिलख़ुश अकड़ गया —
"नहीं, मैं तो वही करूँगा जो कुलदीप कर रहा है।
मैं भी वही लिखूँगा जो सब बच्चे लिख रहे हैं।"

बहुत कोशिशों के बाद भी दिलख़ुश अलग पढ़ने को तैयार नहीं हुआ।
क्योंकि उसे भी वही पढ़ना था जो सारे बच्चे पढ़ रहे थे।

अब टीचर की आफ़त —
"क्या करें, कैसे करें?
इसे पढ़ाएँ तो पढ़ाएँ कैसे? यह तो अलग से कुछ लिख ही नहीं रहा। बहुत मुश्किलें आ रही हैं।
वही लिखना है इसे, जो और बच्चे लिखते या पढ़ते हैं। दूसरी किताबों को हाथ भी नहीं लगा रहा।
बिना अक्षर पहचाने सीधे कैसे पढ़ सकता है?"

लेकिन क्या करें।
सभी सब्जेक्ट्स में दिलख़ुश ने साफ़ कह दिया —
"मैं वही लिखूँगा जो सारे बच्चे लिख रहे हैं।"

सभी ने डिसाइड किया कि करने दो। वैसे भी हम कर ही क्या सकते हैं।

"ये तो सीधे 'बाणभट्ट' ही बनेगा।"
और सभी ठहाके लगाकर हँसने लगे।

अब दिलख़ुश वही लिखता जो क्लास के बाक़ी बच्चे लिखते।लेकिन वह कुछ और ही भाषा के शब्द लिखता —
कुछ उल्टे, कुछ सीधे, कुछ ग़लत, कुछ सही। कुछ चीनी, तो कुछ उर्दू।

ऐसे ही क्लास आगे बढ़ने लगी।
अब तो दिलख़ुश अन्य बच्चों की बराबरी चाहने लगा। जो दो-चार शब्द पल्ले पड़ते, उन्हीं को दोहराने लगा।

कभी प्रार्थना, कभी राष्ट्रगान, रोटी खाते-खाते कोई शब्द। घर में सब ख़ुश कि पढ़ाई तो कर रहा है।

स्कूल में शैक्षिक भ्रमण की बात ज़ोर-शोर से चालू थी। स्टाफ़ रूम में चर्चाएँ शुरू हुईं।

"इस बार तो जयपुर जाएँगे।"
"नहीं, इस बार दिल्ली।"

माधुरी मैम तो आगरा पर अड़ गईं। बाद में सभी की सहमति से जयपुर के लिए हामी भर दी गई।

"जयपुर ठीक रहेगा।
इसकी अनुमति के लिए डी.एम. के पास मेरे साथ दो और टीचर्स, सिंह सर और नीलिमा मैम जाएँगी।"

ठीक 9 बजे तीनों डी.एम. के पास निकल पड़े और कुछ ही देर में सब डी.एम. के पी.ए. (पर्सनल सेक्रेटरी) के पास बैठे थे।

"हमें माननीय ज़िलाधिकारी से मिलना है।"
"आप कौन हैं? यहाँ आने का क्या कारण है?"
"हम स्कूल से आए हैं और हमें बच्चों को भ्रमण पर ले जाने की अनुमति चाहिए।"

"मैडम के लिए चाय लाओ।
मैम, सर अभी दो-तीन दिनों के लिए बाहर गए हैं।
जैसे ही आएँगे मैं अनुमति ले लूँगा।
आप किसी को भी भेज दीजिए।"

चाय पीकर तीनों उठे और नमस्ते करते हुए निकल पड़े।

दूसरे दिन स्कूल पहुँचकर प्रिंसिपल बोलीं —
“नीलिमा, तुम्हारा घर डी.एम. ऑफ़िस के पास ही है।
तुम दो दिन बाद अनुमति कलेक्ट करते हुए स्कूल आना।”

स्कूल में अचानक ही दिलख़ुश के जीजा जी पहुँच गए।
सभी ख़ुश थे कि अब शायद कुछ तारीफ़ सुनने को मिलेगी।

लेकिन ठीक इसके उलट जीजा ज़ोर से चिल्लाकर बोले —

“मैडम, तीन महीने हो गए दिलख़ुश को स्कूल आते हुए।
कल मेरी बहन का लड़का आया था, कह रहा था कि इसे तो कुछ नहीं आता।
रोज़ स्कूल आता है मगर इसको तो अख़बार क्या, अपनी किताब भी पढ़नी नहीं आती। मैं इस पर बहुत ख़र्चा करता हूँ।रोज़ साइकिल पंक्चर करवाकर स्कूल पहुँचता है।
मेरे बहुत पैसे ख़र्च हो रहे हैं। कल तो इसने हद ही कर दी। ब्रेक तोड़कर ले आया है।
इससे अच्छा तो मेरे साथ दिहाड़ी मज़दूरी करता तो दो पैसे कमाता।
कम से कम घर का ख़र्चा चलता।”

“अरे-अरे, यह तो बहुत अच्छी बात है।” माधुरी मैम चशमा ठीक करते हुए क्लास के बाहर गईं।
“हम हाथ जोड़ते हैं, इसे ले जाओ, यह हमारे लिए तो बड़ा उपकार होगा।”

नीलिमा ने कहा —
“बच्चे तो सात-आठ साल पढ़ने के बाद कक्षा 6 में आते हैं। दिलख़ुश तो सीधे 6 में आ गया है। तुम भी थोड़ा धैर्य रखो। समय लगेगा।गड्ढा थोड़ी खोदना है कि फावड़ा उठाया और खोद दिया। साइकिल चलाएगा तो कभी-न-कभी टूटेगी ही, इसमें क्या बड़ी बात है! दस-पंद्रह रुपए खर्च कर दोगे तो आसमान नहीं टूटेगा।”

“मैम, क्या बताऊँ?”
सर पर हाथ रखकर वहीं बैठ गया और दिलख़ुश की साइकिल की ही कहानी सुना दी।
“यह गाँव में एक साइकिल पर कम से कम दो आगे, दो पीछे, और दो अग़ल-बग़ल बच्चे ले जाता था।
हर दूसरे दिन साइकिल तोड़ देता था। वहाँ भी ऐसे ही करता था।”
और वह बड़बड़ाते हुए चला गया।

स्कूल में स्वच्छता अभियान की तैयारी चल रही थी।
प्रिंसिपल ने कहा —
"बच्चो, सभी को एक-एक स्लोगन बनाना है। जैसे, सदैव कूड़ेदान का प्रयोग करें। कूड़ा सड़कों पर न फेंकें।
इसी प्रकार से लिखना और बोलना है। और अपना स्लोगन एक पेज पर लिखकर गत्ते पर चिपकाना है।
फिर स्वच्छता पर रैली निकालनी है।"

सभी एक-एक करके आकर अपना स्लोगन बोल और लिख रहे थे।
सारे बच्चों ने स्लोगन तैयार कर लिए थे।

मैडम बोलीं —
"एक स्लोगन दिलख़ुश के लिए बना दो।"

"नहीं! मैं भी बोलूँगा और मैं भी अपना लिखूँगा।" दिलख़ुश ज़ोर से चिल्लाया।
"दरवाज़ा बंद तो गंदगी बंद।"

ये नारा सुनते ही पूरी कक्षा ठहाकों से गूँज उठी।
"अरे, यह तो अमिताभ बच्चन बन गया, वाह।"

मैडम ने यह काग़ज़ पर लिखा और उस दिन दिलख़ुश बहुत ख़ुश था,
क्योंकि आज उसने कक्षा की बराबरी की थी।

पूरी रैली में दिलख़ुश अपना नारा बोलता रहा।
आज उसे देखकर लग रहा था जैसे दिलख़ुश ने कोई बड़ी डिग्री पास कर ली हो।

फिर दूसरे ही दिन प्रार्थना में विचार बोलने की बारी दिलख़ुश की थी।
लेकिन मैडम ने अगले बच्चे को आकर बोलने को कहा —
"दिलख़ुश जब सीख जाएगा तब बोलेगा।"

लेकिन दिलख़ुश फटाफट आगे आकर प्रश्न पूछने लगा —
"पचीस का गुण खुड बताओ।"

मैथ्स की टीचर ने कल ही गुणनखंड पढ़ाया था।
सभी टीचर्स और बच्चे ठहाके मारकर हँसने लगे।

"सीधे गुणनखंड! गिनती नहीं, पहाड़े नहीं, और सीधे गुणनखंड!
वाह जी दिलख़ुश!"

हर दिन उसका कोई नया कारनामा सामने आ जाता। अब धीरे-धीरे दिलख़ुश बच्चों के साथ मिलकर रहने लगा था, पर अपनी ऊटपटाँग हरकतों से बाज़ नहीं आता था।

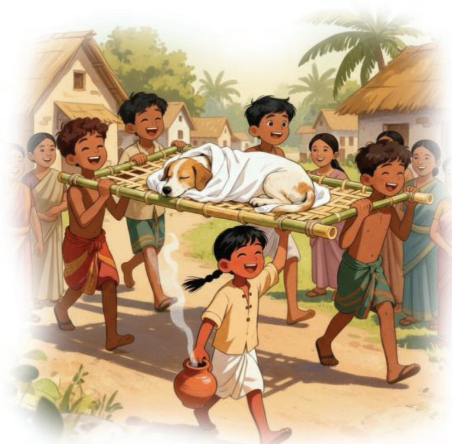

एक दिन अचानक स्कूल की बग़ल में भीड़ इकट्ठा हो गई। किसी ने बताया कि रात को सूरज के दादाजी की मृत्यु हो गई है।
थोड़ी ही देर बाद शवयात्रा शुरू होगी। दिलख़ुश दीवार के पीछे छिपकर पूरा नज़ारा देख रहा था। उसे लगा, वह फिर से गाँव में आ गया है।

वह कुत्ता जो बहुत प्यारा था, उसे लेकर सब अपने घरों से कपड़े, मिट्टी की हांडी सब ले आए थे। क्योंकि एक दिन पहले ही दिलख़ुश की पूरी टीम ने एक शवयात्रा देखी थी, जो उन्हें बहुत मनोरंजक लगी।

आज उनका प्लान था बग़ीचे में जाकर पूरी अर्थी तैयार करना। डंडे, रस्सी, सारा सामान जुटाया गया। अब मुश्किल यह थी कि 'डेड बॉडी' कौन बने।

"मैं तो नहीं बनूँगा।"
"तू छोटा है, तू बन।"
छोटू थोड़ी देर लेटा, फिर उठ गया।
"नहीं, मैं नहीं।"

कोई तैयार नहीं।
बहुत सोच-विचार के बाद कपड़े रखकर उस पर छोटा कुत्ता बैठा दिया गया।
कुत्ता ख़ुश कि आज उसे इज़्ज़त दी जा रही है।

फिर उसे बाँधकर सफ़ेद कपड़े से ढक दिया, हाथ-पाँव बाँध दिए, मुँह खुला छोड़ दिया।
आगे-आगे मिट्टी का मटका बाँधा गया।
ज़ोर-ज़ोर से — "राम नाम सत्य है" बोलते हुए सब रोने का अभिनय कर रहे थे।

लेकिन जैसे ही अर्थी गाँव के रास्ते पर चली, गाँव में खलबली मच गई।
"आख़िर आज कौन मर गया? हमें तो पता ही नहीं चला। और बिना बताए शवयात्रा भी निकाल ली?"

औरतें घर से बाहर आ गईं। जैसे ही बच्चों को देखा, सबने डाँटा।
तो सारे बच्चे अर्थी छोड़कर भाग लिए।

कुत्ता कूँ-कूँ करता रह गया, मानो कह रहा हो — "कोई मुझे खोल दो भाई!"
इसी के साथ वह नकली शवयात्रा समाप्त हुई।

दूसरे दिन सुबह ही नीलिमा डी.एम. के ऑफ़िस पहुँच गई।
पी.ए. ने कहा —
"सर अभी पहुँचे हैं, अभी मिलवाता हूँ।" पीए ने कहा।

जैसे ही नीलिमा का नाम स्लिप अंदर गई, तुरंत बुलवा लिया गया।

सामने देखा तो डी.एम. की बग़ल वाली कुर्सी पर वही आकर्षक लड़का बैठा था जिससे नीलिमा सीढ़ियाँ चढ़ते वक्त टकराई थी।जल्दबाज़ी में उसकी चप्पल फिसल गई थी और उस लड़के ने हाथ थाम लिया था। नीलिमा गिरते-गिरते बची थी।

लड़का बस उसे निहारता रह गया। लंबी पलकें, हिरणी जैसी बड़ी-बड़ी आँखें। उसे देखते-देखते वह पलक झपकाना ही भूल गया।
उस भागदौड़ भरी ज़िंदगी में यह पल अविस्मरणीय बन गया था और वह अभी तक उसी पल में जी रहा था।

नीलिमा शर्म से अपनी बड़ी-बड़ी आँखों को पलकों की ओट में छिपाए बैठी थी।
तभी डी.एम. ने फटाफट काग़ज़ पर साइन किया और कहा —
"आपको तकलीफ़ हुई, इसके लिए माफ़ी चाहता हूँ।"

उसी समय चाय और बिस्किट आ गए।
"पहले मैडम को दीजिए।"
नीलिमा ने चाय तो ले ली, लेकिन दो घूँट पीकर इजाज़त माँगी और केबिन से बाहर चली गई।

उधर, दूसरे साहब पलकें उठने के इंतज़ार में थे कि एक बार फिर उन ख़ूबसूरत आँखों का दीदार कर सकें।
लेकिन इस बार भी निराशा ही हाथ लगी।

नीलिमा मन ही मन सोच रही थी — "कौन होगा यह हैंडसम लड़का? मेरे बारे में क्या सोच रहा होगा?"
पर जैसे ही पीए ने साइन किया हुआ काग़ज़ दिया, उसका चेहरा खिल उठा।

लड़का पूछ भी नहीं सकता था कि कौन है, कहाँ से आई इत्यादि।
क्योंकि वह ख़ुद भी क्राइम ब्रांच में आई.पी.एस. था।
किसी काम के सिलसिले में आया था और उस दिन उसे कहीं और जाना था।
इसीलिए वह यूनिफ़ॉर्म में नहीं था।

स्कूल में गेम्स की भी तैयारियाँ चलने लगीं। बच्चों का चयन हो रहा था।
कोई 100 मीटर रेस, कोई 200, कोई 800, कोई लॉन्ग जम्प, हाई जम्प इत्यादि में चुना गया।
चारों ओर खेल का माहौल था।

जब परिणाम आए तो सारी दौड़ों और जम्प में दिलख़ुश ने ही प्रथम स्थान पाया।
उसे तो रेस के लिए क्या तैयार करना था। वह तो वैसे ही हर वक़्त दौड़ता रहता था।
उसकी लगातार दौड़ने की आदत के कारण दोस्त और शिक्षक कभी-कभी उसे 'मिल्खा' भी पुकारने लगे थे।

वह दिन भी आ गया जब ज़िले स्तर पर गेम्स होने थे। दो शिक्षिकाएँ बच्चों को लेकर गईं।

दौड़ की बारी आई।
प्रत्येक ब्लॉक से केवल दो बच्चे ही भाग ले सकते थे।

दिलख़ुश को ट्रैक पर खड़ा कर दिया गया, लेकिन उसने इंकार कर दिया —
"मैं अकेला नहीं दौड़ूँगा। जब तक मेरे स्कूल के और बच्चे साथ नहीं दौड़ते।"

दोनों शिक्षिकाएँ दुखी हो गईं कि अब क्या करें।
तब दिलख़ुश के दोस्तों को बुलाया गया और समझाया गया —
"ये भी ट्रैक के बाहर से दौड़ेंगे।"

तब जाकर दिलख़ुश दौड़ने के लिए तैयार हुआ।

लेकिन जब दिलख़ुश दौड़ा तो चारों ओर आवाज़ें गूँज उठीं —
"दिलख़ुश और तेज़! दिलख़ुश और तेज़!"

शिक्षिकाओं को देखकर लग रहा था जैसे यह उनकी ही प्रतियोगिता हो।
वे ट्रैक के बाहर बच्चों से भी तेज़ दौड़ रही थीं।

नीलिमा की तो आज बहुत बड़ी परीक्षा थी।
इतनी मेहनत तो शायद उसने अपने एग्ज़ाम में भी नहीं की होगी।

जब फ़िनिशिंग पॉइंट नज़दीक आया तो बच्चों और शिक्षिकाओं की साँसें थम-सी गईं।
कानों में किसी की आवाज़ नहीं सुनाई दे रही थी।

अचानक देखा कि दिलख़ुश सबसे आगे निकल गया!
ज्यों ही दिलख़ुश सबसे आगे निकला, पूरे मैदान में जश्न का शोर गूँज उठा।

दिलख़ुश दौड़ जीत गया। दोस्तों ने दिलख़ुश को कंधे पर उठा लिया।
दिलख़ुश मन ही मन सोच रहा था —
“रोज़ तो डाँट और मार ही पड़ती थी। पहली बार दौड़ में शाबाशी मिली है। वाह!”

अब हर रेस में दिलख़ुश आगे निकल आता और अन्य बच्चे ट्रैक पर गिर जाते या रेस छोड़कर बीच में वापस आ जाते। लेकिन दिलख़ुश तो गिरकर भी नहीं रुकता, बस दौड़ता ही चला जाता।

शिक्षिकाएँ उसे ग्लूकोज़ खाने को दे रही थीं, जो दिलख़ुश को बहुत पसंद आया।
शिक्षिकाएँ उसके पैरों की पिंडलियाँ सहलाने लगीं, लेकिन उसे जैसे कोई असर ही नहीं हुआ।
शरमा कर वह दूर भाग गया।

जितने भी खेलों में दिलख़ुश ने भाग लिया, उन सबमें उसने प्रथम स्थान प्राप्त किया।
अब उस दिन तो चैंपियन का नाम घोषित होना था और सब इंतज़ार में थे।

“और इस साल का चैंपियन है, दिलख़ुश!”
उसे मंच पर बुलाया गया और मुख्य अतिथि ने उसके हाथों में शील्ड थमा दी।

फिर तो दिलख़ुश सबका चहेता बन गया।
स्कूल में उसकी इज़्ज़त बढ़ गई थी और वह अकड़ कर चलने लगा था।

इधर डी.एम. और आई.पी.एस. अजय दोनों क्लासमेट थे और अच्छे दोस्त भी।

नीलिमा के जाते ही अभिलाश (डी.एम.) ने पूछा —
"और, कैसे आना हुआ? शादी कब कर रहे हो?"

"यार, शादी तो एक महीने बाद है। कार्ड भी दो-चार दिन में आ जाएँगे।
अपने लिए भी कपड़े देखने हैं, इसलिए आज परिवार के साथ मार्केट जा रहा हूँ।"

"चल, मैं भी तैयारी करता हूँ तेरी शादी के लिए।"

अजय जाते-जाते पूछ बैठा —
"कौन थी ये मैडम? और इनका क्या काम था?"

"कुछ नहीं। ये मिस नीलिमा स्कूल टीचर हैं। बस बच्चों को जयपुर घुमाने की अनुमति लेने आयी थीं।
शायद कल सुबह आठ बजे निकलेंगी।"

"अच्छा, मैं चलता हूँ।"
यह कहते हुए अजय तेज़ी से घर की ओर निकल गया।

घर पहुँचते ही माँ बोलीं —
“अजय, कहाँ चला गया था? छुट्टी ली है तो हमारे साथ रहो, शॉपिंग के लिए जाना है।”

अजय सीधे अपने कमरे में चला गया।
मन में बेचैनी थी। वह समझ ही नहीं पा रहा था कि यह उलझन क्यों है

“बेटा, खाना खा लो।”
“आया मम्मी।”

डाइनिंग टेबल पर सभी बैठे थे। माँ देख रही थीं कि अजय ठीक ढंग से खाना नहीं खा रहा था।
वह परेशान लग रहा था।

“अजय, क्या बात है? तुम ज़्यादा ख़ुश नहीं लग रहे हो। कोई ऑफ़िस की परेशानी है?”
“नहीं माँ, ठीक हूँ। अभी फ्रेश होकर आता हूँ, फिर चलते हैं।”

सब मिलकर मॉल शॉपिंग के लिए निकले। पापा, मम्मी, छोटी बहन और अजय।

मम्मी नए-नए डिज़ाइन उठा रही थीं।
“अजय, ये ट्राई करो।”

अजय ने एक-दो शेरवानी ट्राई की और फिर फ़ोन में बिज़ी हो गया।
“अजय, यहाँ भी फ़ोन? कभी तो हमारे साथ रह लिया करो।
पहले कपड़े पसंद कर लो, फिर बातें करना।”

काफ़ी मुश्किल से कपड़े फ़ाइनल हो पाए।
“मम्मी, आपको जो अच्छा लग रहा है, वही ले लीजिए।”

“भैया, भाभी का फ़ोन आया है। कह रही हैं, बहुत देर से ट्राई कर रही हैं, आपसे बात करनी है। आप उनसे बात कर लीजिए।”

“अभी कॉल बैक करता हूँ।”

अजय ने रिया को थोड़ी देर बाद फ़ोन किया।
"अजय, कौन-से रंग की शेरवानी है? मुझे क्यों नहीं बुलाया?"
"रिया, मम्मी और निक्की ने रंग पसंद किया है, उन्हीं से पूछ लो।"

काफ़ी रात हो गई थी। अजय फिर अपने कमरे में चला गया। उसे समझ ही नहीं आ रहा था कि वह परेशान क्यों हो रहा है।

बहुत मुश्किल से वह बाहर आया और खाना खाया।

सुबह उठते ही —
"अजय, आज तूने छुट्टी ले रखी है? सुबह-सुबह कहाँ की तैयारी हो रही है?"
"माँ, मुझे ज़रूरी काम से बाहर जाना है। कल आऊँगा।"

और वह गाड़ी उठाकर तेज़ी से निकल गया।

बच्चे सात बजे ही स्कूल पहुँच गए।
पानी की बोतलें, खाने-पीने की चीज़ें, बैग कंधों पर टाँगे, और लगभग सभी बच्चों के पेरेंट्स खड़े थे।

बच्चे तो रात भर सोए ही नहीं। वे बहुत ख़ुश थे।

दिलख़ुश का जीजा आया।
"मैडम, जयपुर जाने से पढ़ाई का क्या लेना-देना?
हम यहाँ पढ़ने भेजते हैं, घूमने नहीं। अबकी बार बहुत मुश्किल से भेज रहा हूँ।पच्चीस रुपया दिया है पूरा।
अगली बार घूमने नहीं भेजूँगा। रात भर सोने ही नहीं दिया।
हर आधे घंटे में पूछता रहा...पाँच कब बजेंगे, मुझे घूमने जाना है।
बहुत तंग कर दिया। अब घर जाकर एक-दो घंटे सोऊँगा, तब जाकर काम पर जाऊँगा।"

और वह साइकिल पर ज़ोर से पैडल मारते हुए चला गया।

बच्चों को तो मानो जन्नत मिल गई थी। तीन गाड़ियाँ बैनर लगी हुईं।

बच्चों ने गाड़ी में बैठते ही खिड़की के लिए लड़ाई शुरू कर दी और गाड़ियाँ चलने को जैसे ही तैयार हुईं, उससे पहले ही सारे बच्चों ने टिफ़िन खोलकर खाना शुरू कर दिया। सभी मिल बाँट कर खा रहे थे, लेकिन दिलख़ुश कुछ भी नहीं लाया था। सभी बच्चे उसे भी खाना दे रहे थे।

एक-दो घंटे गाना गाने और बातें करने के बाद सब धीरे-धीरे सो गए। रास्ता बहुत लंबा था। दोपहर के क़रीब दो बजे सबको भूख लग रही थी। सारी गाड़ियाँ एक सुंदर-सी जगह पर रुकीं. चारों ओर लहलहाते पेड़, सामने नदी और पास में एक ढाबा। सब बच्चे उतरे। खाना स्कूल से ही पैक होकर आया था।

"सभी गोल घेरे में बैठ जाओ। सामने हैंडपंप है, हाथ धोकर आओ, सब खाना खाएँगे।"

सबने खाना खाया और टीचर के आदेश पर सब गाड़ी में बैठ गए।
"जीत सिंह, सारे बच्चों को गिनो। पूरे गाड़ी में बैठे या नहीं। तब तक हम ढाबे में चाय पीकर आते हैं।"
"कुछ बच्चे बैठ गए हैं, कुछ अभी आ रहे हैं।"

इसी बीच ढाबे पर एक कार रुकी और उसमें से एक लड़का नीचे उतरा। सभी टीचर्स उसी की ओर देखने लगे और चाय ख़त्म करके गाड़ी की ओर बढ़ने लगे।

नीलिमा जैसे ही उठीं और सड़क की ओर मुड़ीं, उनके पैर लड़खड़ा गए। अचानक उसका बैग हाथ से छूटकर ज़मीन पर गिर पड़ा। नीलिमा सड़क की ओर पीठ करके बैठी थीं। जैसे ही उसने नज़र उठाई, देखा कि यह तो वही लड़का है, जिससे वह डी.एम. की ऑफ़िस में सीढ़ियों पर टकराई थीं और बाद में डी.एम. के साथ बैठे हुए देखा था। जिसके लिए नीलिमा इतने दिनों से परेशान थीं और जिसके कारण उनके दिन का चैन और रातों की नींद ग़ायब थी।

लड़का भी सकपका गया था। ऐसा लग रहा था जैसे वह अचानक वहीं पहुँच गया हो।
"अरे, आप?" नज़रें मिलते ही लड़का बोला।
"यहाँ कैसे? नमस्ते।"
"नमस्ते... और आप?"
"मैं जयपुर जा रहा हूँ। मैं क्राइम ब्रांच में आई.पी.एस. ऑफ़िसर हूँ और किसी इन्वेस्टिगेशन के सिलसिले में जा रहा हूँ। और आप?"

"मैं अपने स्कूल के बच्चों और टीचर्स के साथ शैक्षिक भ्रमण के लिए जयपुर जा रही हूँ। इसकी अनुमति के लिए ही मैं उस दिन डी.एम. ऑफ़िस आयी थी, और उसी दिन आपको वहाँ पर देखा था।"

अजय मन ही मन बेहद ख़ुश हो गया कि कम से कम बात तो शुरू हुई।

तभी बच्चों के चिल्लाने की आवाज़ आई —
"बचाओ! बचाओ! बचाओ! संजय नदी में गिर गया है!"

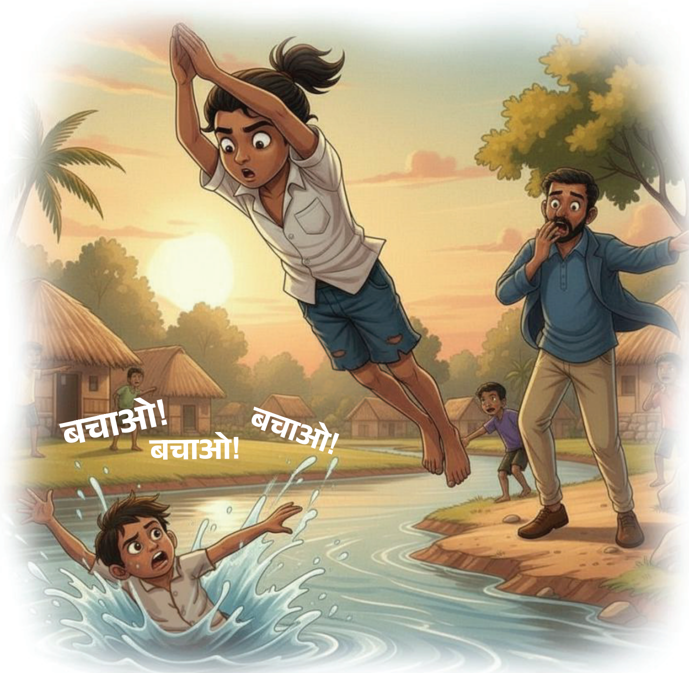

सभी उसी ओर दौड़ने लगे। लेकिन जब तक सब नदी के किनारे पहुँचे, तभी अजय ने दौड़ते-दौड़ते अपना कोट उतारकर फेंक दिया और नदी में कूदने ही वाला था कि एक दूसरा बच्चा चीते की फुर्ती से दौड़ता हुआ सीधे नदी में कूद गया। फुर्ती से तैरते हुए कुछ ही सेकंड में उसने संजय को किनारे ला दिया।

उसके कूदने और तैरने का जो तरीक़ा था, वह बहुत ही निर्भीक और मंझा हुआ था। यह देखकर अजय भी भौचक्का रह गया।

"इतना छोटा बच्चा दस मीटर ऊँची छलाँग कैसे लगा सकता है और इतनी जल्दी बच्चे को साथ लेकर कैसे तैर सकता है?"

सभी बच्चे ख़ुशी के मारे चिल्लाने लगे — "दिलख़ुश! दिलख़ुश! दिलख़ुश!"

शिक्षिकाओं की जान में जान आई। सभी दिलख़ुश की पीठ थपथपा रहे थे। सभी ने संजय को मिलकर पोंछा, तौलिये से साफ़ किया, कपड़े बदलवाए और फ़र्स्ट एड दिलवाकर चाय पिलाई। फिर भी संजय को बेहोशी-सी आ रही थी। वह ठीक ढंग से खड़ा नहीं हो पा रहा था।

अजय भी वहीं खड़ा हो गया। वह दिलख़ुश के कारनामों से बेहद अचंभित था। अजय ने नीलिमा से पूछा — "ये बहादुर बच्चा कौन है?"

नीलिमा ने संक्षेप में बताया — "यह इसी साल स्कूल में भर्ती हुआ है। इससे पहले यह गाँव में ही रहता था और कभी भी स्कूल नहीं गया। ये सब दिलख़ुश ने अपने गाँव में ही सीखा है।"

"ओह, वेरी स्ट्रेंज। हम सब अपने बच्चों को इतने बढ़िया और महंगे स्कूलों में पढ़ाते हैं और देश-विदेश की सारी चीज़ें सिखाते हैं, स्विमिंग, डांसिंग इत्यादि। फिर भी उन बच्चों में यह कॉन्फ़िडेंस नहीं दिखता। मैं इस साल राष्ट्रपति पुरस्कार के लिए दिलख़ुश का नाम रिकमंड करूँगा।"

धीरे-धीरे माहौल शांत हो गया। सभी गाड़ियों में अपनी-अपनी सीटों पर बैठने लगे।

नीलिमा अनमनी-सी अपनी गाड़ी की ओर बढ़ी, लेकिन तभी अजय बोला —

"आपको ऐतराज़ न हो तो आप मेरे साथ गाड़ी में बैठ सकती हैं, और संजय भी। उसे कार में आराम मिलेगा और वह भी ठीक महसूस करेगा।"

प्रिंसिपल ने कहा — "यह ठीक है नीलिमा, तुम कार में बैठ जाओ। संजय भी आराम से चला जाएगा। वह अभी ठीक नहीं है। रास्ते में कहीं अस्पताल दिखे तो उसे एक बार दिखा देना, ताकि हम सब भी तसल्ली से अपनी यात्रा एंजॉय कर सकें।"

संजय और नीलिमा अजय की गाड़ी में बैठ गए।

अजय और नीलिमा दोनों के चेहरों पर ख़ुशी की रौनक आ गई थी। फिर भी नीलिमा बोली — “आपको हमारे कारण परेशानी तो नहीं होगी?”

“नहीं-नहीं, कैसी परेशानी। एक पुलिस ऑफ़िसर होने के नाते मेरा भी फ़र्ज़ बनता है कि मैं आपकी मदद करूँ।”

थोड़ी देर बाद संजय पीछे की सीट पर सो गया। अजय ख़ुद गाड़ी चला रहा था और बगल वाली सीट पर ख़ामोशी से नीलिमा बैठी थी।

रास्ते में दोनों के बीच बहुत कम बातें हुईं। केवल नाम, कहाँ से आए, वग़ैरह-वग़ैरह। रास्ते में संजय को डॉक्टर को दिखाया गया। डॉक्टर ने दो गोलियाँ देकर कहा — “बच्चा बिलकुल ठीक है, इसे कोई परेशानी नहीं है।”

शाम होते-होते सब होटल पहुँच गए। अजय, नीलिमा और संजय को छोड़कर अपने होटल चला गया। फिर दूसरे दिन जयपुर में बच्चों का घूमना शुरू हुआ। सारे बच्चे बेहद ख़ुश थे, नयी-नयी चीज़ें देख रहे थे। राजस्थानी गाने, कठपुतली का डांस, नृत्य।

वहीं फिर से अजय और नीलिमा की मुलाक़ात हो गई। लेकिन कुछ प्रोटोकॉल और कुछ शिक्षिका की गरिमा ने दोनों को रोक लिया। दोनों कनखियों से ही एक-दूसरे को देख रहे थे।

अब तो अजय पूछ बैठा — “आप लोग वापस कब जा रहे हैं?”

“कल सुबह आठ बजे निकलेंगे।”

“मैं भी कल ही जा रहा हूँ।” और आदेश देते हुए बोला — “कल मैं सुबह आपके होटल पहुँच जाऊँगा आपको लेने।” और तेज़ी से चला गया।

ठीक आठ बजे अजय होटल पहुँच गया। सभी लोग बाहर ही खड़े थे। सभी ने अजय को नमस्ते किया।

अजय रौबीली आवाज़ में बोला — “आइए नीलिमा जी, संजय तुम भी बैठो।” अजय की आवाज़ में आदेश था। नीलिमा और संजय कार में चुपचाप बैठ गए और कार तेज़ी से निकल गई।

रास्ते में दोनों चुप बैठे थे। अजय के दिल-दिमाग़ में भारी उथल-पुथल चल रही थी। उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह यह सब क्यों कर रहा है।

“एक महीने बाद तो मेरी शादी है और यह सब मैं क्या कर रहा हूँ?”

रास्ते में कई बार अजय की माँ, बहन, मंगेतर और पापा के फ़ोन आते रहे — “तुम कब तक पहुँचोगे, इत्यादि।” लेकिन नीलिमा बहुत ख़ुश थी। वह मन ही मन मुस्कुरा रही थी।

अजय ने सन्नाटा तोड़ते हुए पूछा — “नीलिमा, तुम्हारे घर में कौन-कौन है?”

“मेरे घर में मैं और मेरे दादा-दादी रहते हैं। मेरे माता-पिता की कुछ साल पहले कार एक्सिडेंट में मृत्यु हो गई थी।”

यह सुनते ही नीलिमा की आँखों में आँसू छलक आए।

"ओह, आई एम सॉरी।" और दोनों चुप हो गए। गाड़ी शहर के क़रीब पहुँच गई।

नीलिमा बोली — "पहले संजय को उसके घर छोड़ना पड़ेगा।"

संजय को छोड़कर फिर नीलिमा को उसके घर छोड़ा। नीलिमा उतरते हुए बोली — "सर, आइए, चाय पीकर जाइए।"

"नहीं, फिर कभी पीऊँगा।" और तेज़ी से निकल गया, क्योंकि घर में सभी अजय का इंतज़ार कर रहे थे।

कुछ दिन बाद जब सभी स्कूल पहुँचे तो यह ख़बर हर जगह पहुँच चुकी थी। सारे अख़बारों के फ्रंट पेज पर दिलख़ुश की फ़ोटो छपी थी, और न्यूज़ चैनलों पर भी यह न्यूज़ आ रही थी कि किस तरह एक तेरह साल के बच्चे ने एक दस साल के बच्चे की जान बचाई।

तुरंत ही सभी विभागों से दिलख़ुश का नाम राष्ट्रपति पुरस्कार के लिए चयनित हो गया। बीस दिन बाद दिल्ली जाना था राष्ट्रपति पुरस्कार लेने।

स्कूल मीटिंग रूम में सभी टीचर्स दिलख़ुश की तारीफ़ कर रहे थे।

बाद में प्रिंसिपल बोलीं —

"इसका सम्मान हम अपने विद्यालय में पहले करेंगे। पहले लगा कि हमने दिलख़ुश को एड्मिशन देकर कुछ ग़लती कर दी है, लेकिन अब लगता है कि जिन विद्वानों ने आर.टी.ई. एक्ट बनाया, उन्होंने बच्चों पर गहन अध्ययन किया होगा।

जो बच्चे किसी कारण से विद्यालय नहीं गए और उनकी उम्र अधिक हो गई, उनकी बौद्धिक क्षमता परिपक्व हो जाती है, जिससे वे चीज़ों को जल्दी समझ लेते हैं। ऐसे बच्चे कुछ ही महीनों में अपनी उपलब्धियाँ हासिल कर लेते हैं।

भले ही बच्चा उतना न कर पाए जितना अन्य बच्चे कर रहे हैं, लेकिन उनमें अनेक प्रतिभाएँ होती हैं जिनके आधार पर हम उनका आकलन कर सकते हैं। आगे चलकर बच्चा शायद उतना न पढ़ पाए, लेकिन वह अच्छा खिलाड़ी, एथलीट, तैराक या कलाकार बन सकता है। यह पहचान विद्यालय पहुँचने के बाद ही चिन्हित की जा सकती है।"

इधर अजय की बेचैनी बढ़ती जा रही थी, पर बोले भी तो क्या बोले — "अपनी इच्छा से रिया से शादी के लिए तैयार हुआ था, बचपन से जानता हूँ... अब क्या करूँ?"

अजय के पिता बेटे की परेशानी देख रहे थे पर समझ नहीं पा रहे थे कि आख़िर बात क्या है। जिस शादी के लिए सब उत्साहित थे, रिया दिनभर फ़ोन करके नहीं थकती थी, वहीं अजय एक भी फ़ोन रिया को नहीं कर रहा था। और मम्मी-पापा जो भी पूछते, बस इतना कहता — "जो तुम्हें ठीक लगे।"

अब अजय के पिता उसके कमरे में आए और पूछा — "क्या बात है? आजकल तुम बहुत परेशान लग रहे हो, किसी से ठीक से बातें भी नहीं कर रहे। तुम्हें देखकर लग रहा है कि तुम ख़ुश नहीं हो।"

"नहीं पापा, एक उलझन हो गई है और उसे मैं सुलझा नहीं पा रहा हूँ। अगर दिल की सुनता हूँ तो सबको परेशानी होगी, और अगर दिमाग़ की सुनी तो मैं परेशान हो जाऊँगा।"

"क्या रिया तुम्हें पसंद नहीं है?"

"नहीं पापा, रिया बहुत अच्छी है। उससे जो भी शादी करेगा वह बहुत भाग्यशाली होगा।"

"तो फिर क्या बात है? इतना परेशान तो मैंने तुम्हें कभी एग्ज़ाम में भी नहीं देखा। मुझसे कहो, क्या पता मैं तुम्हारी मदद कर पाऊँ।"

"ठीक है पापा, ज़रूर बताऊँगा।" और यह कहकर अजय चुप हो गया।

दो दिन बाद ही विद्यालय में भव्य आयोजन किया गया। सभी गणमान्य व्यक्ति, मंत्री, विधायक, जिलाधिकारी, आईपीएस अजय समेत सभी सम्मानित लोगों को बुलाया गया। उस मंच पर दिलख़ुश को सम्मानित किया गया। उसके परिवार के लोगों को भी बुलाया गया। सभी टीचर्स ख़ुशी के मारे इधर-उधर दौड़ रहे थे।

कार्यक्रम के समापन पर शिक्षा मंत्री ने भावुक होकर घोषणा की — "मुझे बेहद ख़ुशी है कि हमारे यहाँ से दिलख़ुश का चयन राष्ट्रपति पुरस्कार के लिए हो चुका है। मेरी ओर से पूरे विद्यालय के शिक्षक और प्यारे बच्चे सम्मान के योग्य हैं। मैं विद्यालय के पूरे स्टाफ़ एवं बच्चों को ढेर सारी शुभकामनाएँ और बधाई देता हूँ। मैं दिल्ली भी जाऊँगा। वहाँ पर हमारे विद्यालय के बच्चे दिलख़ुश को 'राष्ट्रीय वीरता पुरस्कार' से सम्मानित किया जाएगा, जो २६ जनवरी की पूर्व संध्या पर बहादुर बच्चों को दिया जाता है।"

इधर अजय नीलिमा से बातें करने की कोशिश कर रहा था, लेकिन प्रोटोकॉल के कारण कुछ भी बात नहीं हो पाई। केवल औपचारिक बातें — "कैसे हो? आपको ढेर सारी बधाई... कांग्रेचुलेशन्स इत्यादि।" कार्यक्रम चूँकि शाम का था, रोशनी में नीलिमा बहुत सुंदर लग रही थी और माइक भी उसी ने संभाला था।

जल्द ही दिल्ली जाने का समय आ गया। सभी तैयारियों में लग गए। दिलख़ुश के घर वाले भी व्यस्त थे। सबसे बड़ा सवाल यही था — "कौन क्या पहने?"

सभी ने बाज़ार से नए कपड़े ख़रीदे और समय से पहले तैयार हो गए। थोड़ी देर बाद ही दिलख़ुश को गाड़ी लेने आ गई। सारे लोग ख़ुशी के मारे उछल पड़े और गाड़ी में बैठकर दिल्ली की ओर निकल पड़े।

"मैं खिड़की पर बैठूँगा दीदी, तुम बीच में बैठो।"
"नहीं, मुझे चक्कर और उल्टी आती है। तू बीच में ही बैठ, मैं किनारे बैठूँगी।"
"नहीं दीदी, मैं ही खिड़की पर बैठूँगा।"

इसी धक्का-मुक्की में दिलख़ुश की दीदी को उल्टी हो गई। दिलख़ुश के सारे कपड़े उबकाई से तर-बतर हो गए और पूरी गाड़ी में बदबू फैल गई। सभी अपने-अपने नाक-मुँह बंद करने लगे। ड्राइवर ने रास्ते में

पानी देखकर गाड़ी रोकी और दिलख़ुश ने अपने कपड़े साफ़ किए। उसका रो-रोकर बुरा हाल था। एक तो नए कपड़े खराब हो गए, ऊपर से पुरस्कार लेने जा रहे थे, तो दूसरे कपड़े लेने के लिए रुक भी नहीं सकते थे।

"दीदी, तुमने मेरे सारे कपड़े खराब कर दिए!"
"मैंने जान-बूझकर नहीं किया। उल्टी अचानक आ गई। मैं तुम्हारे लिए और कपड़े भी लाई हूँ, तुम उन्हें पहन लेना।"

आख़िरकार नीलिमा को हस्तक्षेप करना पड़ा — "हम विद्यालय की ओर से दिलख़ुश के लिए नए कपड़े लाए हैं। इतना ही नहीं, जूते, बेल्ट और कैप भी हैं। अब खुश हो जाओ। चलो ड्राइवर।"

(राष्ट्रीय वीरता पुरस्कार भारत में हर वर्ष 26 जनवरी की पूर्व संध्या पर बहादुर बच्चों को दिए जाते हैं। भारतीय बाल कल्याण परिषद ने 1957 में ये पुरस्कार शुरू किए थे। पुरस्कार के रूप में एक पदक, प्रमाण-पत्र और नगद राशि दी जाती है। साथ ही सभी बच्चों को पढ़ाई पूरी करने तक वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। 26 जनवरी के दिन ये बहादुर बच्चे हाथी पर सवारी करते हुए गणतंत्र दिवस परेड में सम्मानित होते हैं।)

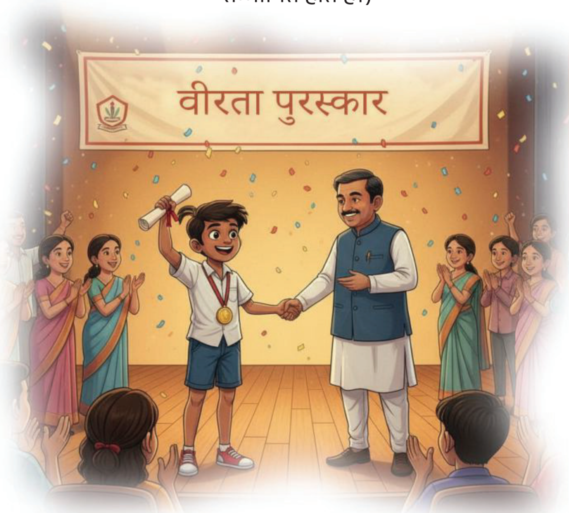

बच्चों के नाम एक-एक करके 26 जनवरी की पूर्व संध्या पर पुकारे जा रहे थे। दिलख़ुश और उसका परिवार बेहद खुश था।

शिक्षा मंत्री, स्कूल प्रिंसिपल, शिक्षक और अजय भी गदगद थे। जैसे ही दिलख़ुश का नाम अनाउन्स हुआ, उसका पूरा परिवार आँसुओं के सरोवर में डूब गया। चारों ओर तालियों की गड़गड़ाहट गूँज उठी।

"दिलख़ुश, उम्र 13 वर्ष, जिसने अपने दोस्त को नदी में डूबने से बचाया, को राष्ट्रीय वीरता पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।"

तालियों की गड़गड़ाहट के बीच दिलख़ुश को एक पदक, प्रमाण-पत्र तथा नगद राशि दी गई। वह पुरस्कार लेकर अपने परिवार के पास आया और गर्व से पदक व प्रमाण-पत्र दिखाने लगा। पर उसके परिवार वाले उतने प्रसन्न नहीं दिख रहे थे। वे काग़ज़ों को उलट-पलट कर देख रहे थे।

तभी उसकी बहन बोल पड़ी — "ये क्या है? किसी काम का नहीं। इसके साथ कुछ ऐसा भी तो देते जो घर में काम आ जाता। कम से कम एक कूकर ही दे देते, खाना तो बनता। कुछ तो काम आता।"

जीजा ने पीठ पर चपत मारते हुए कहा — "अरे क्यों बचाया तूने? हमें लगा सोने-चाँदी मिलेगा। कम से कम बेचकर कुछ काम हो जाएगा। ज़मीन ही छुड़वा लेते। क्या है ये? मेरी दो दिन की दिहाड़ी खराब कर दी। चलो मानते हैं की थोड़ी-बहुत इज़्ज़त मिली, बड़े लोगों के साथ बैठने का मौक़ा तो मिला। पर इसका क्या करेंगे?"

बहन भी बोली — "हाँ, मैं भी पहली बार बड़े लोगों के साथ बैठी हूँ।"

अगले दिन दिलख़ुश को नए कपड़े पहनाए गए और 26 जनवरी की परेड में सभी बहादुर बच्चों के साथ हाथी पर बैठाया गया। सारे बच्चे बेहद ख़ुश नज़र आ रहे थे।

दिलख़ुश आत्मविश्वास से भरा हुआ हाथी पर बैठा था। वह एक साधारण प्रतिभागी नहीं, बल्कि महावत-सा लग रहा था, जिसके चेहरे पर कहीं भी डर का अंश नहीं था।

उसका परिवार तालियाँ बजाते हुए फूला नहीं समा रहा था। उनकी आँखों में इस बार सच्चे गर्व और ख़ुशी के आँसू थे।। शिक्षक, शिक्षा मंत्री, पुलिस अधिकारी से लेकर आम लोग तक, सभी के चेहरे पर खुशी और गर्व का समा था।

लेकिन अजय के चेहरे पर एक अजीब-सी ख़ामोशी थी। उसके भीतर एक अजीब द्वंद्व था —

"एक तरफ़ रिया से शादी, परिवार की उम्मीदें... और दूसरी तरफ़ दिल का यह अनजाना खिंचाव। क्या वाक़ई मैं सही रास्ते पर हूँ?"

कार्यक्रम समाप्त हुआ और सभी अपने-अपने गंतव्यों को लौट गये।

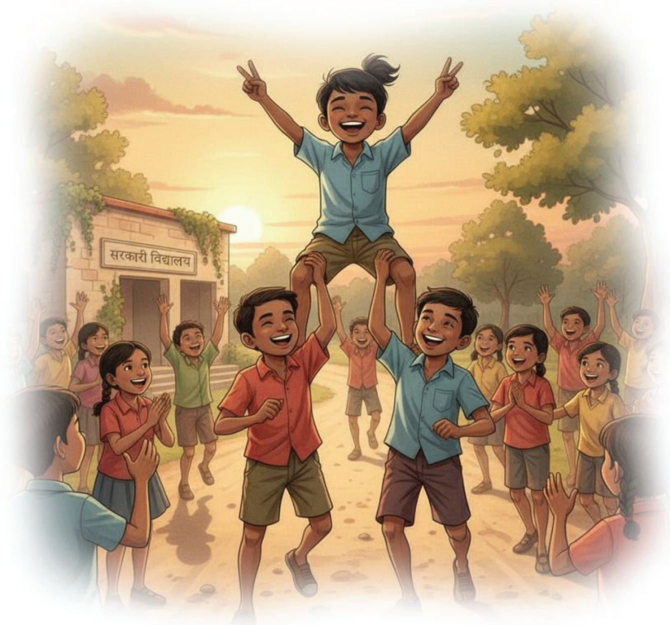

विद्यालय में प्रार्थना स्थल पर बच्चे लाइन में लग रहे थे। बाहर से कुछ बच्चे दिलख़ुश को कंधे पर उठाए हुए नारे लगाते हुए ला रहे थे —

“हमारा साथी... दिलख़ुश भाई!
हमारी शान... दिलख़ुश भाई!
दिलख़ुश भाई... ज़िंदाबाद, ज़िंदाबाद!”

बच्चों का जत्था प्रार्थना स्थल में दाख़िल हुआ। सभी शिक्षक अत्यंत प्रसन्न थे। प्रार्थना ख़त्म होने के बाद नीलिमा ने दिलख़ुश को मंच पर बुलाया।

नीलिमा ने घोषणा की — “दिलख़ुश मंच पर आए और हमारे विद्यालय तथा छात्र-छात्राओं द्वारा लाए गए उपहारों को ग्रहण करे।”

सभी अध्यापक और छात्र-छात्राओं ने उपहार दिलख़ुश को दिए। माहौल ख़ुशी से भर गया।

फिर नीलिमा बोली — "अब मैं आग्रह करती हूँ कि हमारी मुखिया (प्रिंसिपल) मंच पर आएँ और बच्चों को आशीर्वचन दें।"

प्रिंसिपल ने कहा —

"प्रिय बच्चों और सम्मानित साथियों, आज हमारे विद्यालय के लिए गर्व का दिन है। जिस बालक को कभी कोई विद्यालय प्रवेश नहीं देना चाहता था, वही आज वीरता पुरस्कार लेकर लौटा है। मुझे गर्व है कि जिस बालक को कोई भी विद्यालय एडमिशन देने को तैयार नहीं था, उसे शिक्षा का अधिकार (RTE) के अंतर्गत हमने प्रवेश दिया। यह 'शिक्षा का अधिकार' की सच्ची सफलता है। शुरू में हमें भी लगा कि यह नीति शायद कठिन है, लेकिन अब लगता है कि शिक्षा का अधिकार बनाने वाले विद्वानों ने गहन अध्ययन कर सही निर्णय लिया।दिलख़ुश ने दिखा दिया कि हर बच्चे में प्रतिभा छिपी होती है। ज़रूरत है तो बस विश्वास और अवसर की। आज वह अवसर भी है और दिलख़ुश नाम की प्रेरणा भी।"

प्रिंसिपल ने अंत में कहा —

"मैं अपनी शिक्षिका नीलिमा को विशेष धन्यवाद देना चाहूँगी। यह सब उनके दृढ़ निश्चय और मेहनत का ही नतीजा है। साथ ही विद्यालय के सभी शिक्षकों का भी तहेदिल से आभार। आपकी कोशिशों से आज हमारे विद्यालय का नाम भारत के पटल पर आया है। और अन्त में मेरे प्यारे बच्चों को आशीर्वाद। आप सब उज्ज्वल भविष्य की ओर बढ़ें। धन्यवाद!"

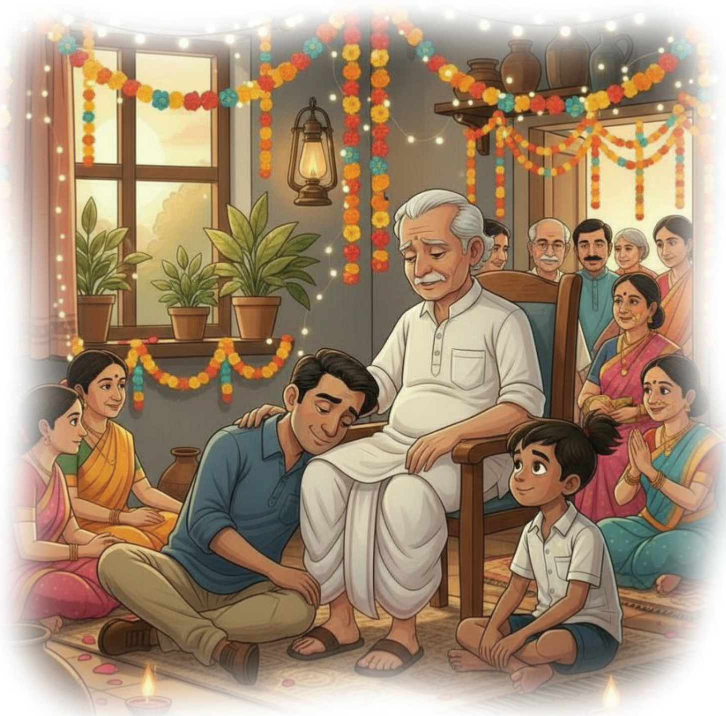

टीचर्स-रूम में टेबल पर शादी का कार्ड रखा था।
माधुरी मैम ज़ोर-ज़ोर से पढ़ने लगीं —
"अजय सर का कार्ड है... शादी है।"
"किससे?"
"दुल्हन का नाम... रिया।"

ये बातें सुनकर दिलख़ुश का चेहरा उतर गया। वह चुपचाप कक्षा में आया। नीलिमा किताब हाथ में लिये बैठी थी, लेकिन साफ़ दिख रहा था कि वह खुद को सँभालने की कोशिश कर रही है। उसकी आँखें पढ़ नहीं रहीं थीं, बस खाली पन्नों को ताक रही थीं।

दिलख़ुश एक पल भी नहीं रुका। वह सीधा विद्यालय के गेट की ओर दौड़ पड़ा। चौकीदार ने भागकर खबर दी — "दिलख़ुश स्कूल से बाहर भाग गया है।" घबराहट में सब उसे ढूँढने लगे, लेकिन वह कहीं नहीं मिला।

उधर अजय के घर में चारों तरफ़ शोर और रौनक थी। रिश्तेदारों से घर भरा हुआ था। अचानक दिलख़ुश गेट खोलकर अन्दर घुस आया।
"अरे रुको, कौन हो तुम?" चौकीदार उसके पीछे भागता हुआ आया। लेकिन दिलख़ुश तेज़ी से भीतर कमरे में पहुँचा जहाँ अजय, उसके माता-पिता और कुछ मेहमान बैठे थे।

अजय खामोश था, पिता के चेहरे पर चिंता थी। उसके पिताजी ये समझ नहीं पा रहे थे कि बेटा इतना चुप क्यों है। तभी दिलख़ुश दौड़कर अपने घुटनों के बल अजय के पिता के सामने बैठ गया।

"दादाजी... दादाजी!"

सब स्तब्ध रह गये। अजय के पिता ने हैरानी से उसकी ओर देखा।

"क्या हुआ बेटा? रो क्यों रहे हो?"

दिलख़ुश फफकते हुए बोला —
"दादाजी... नीलिमा मैडम की शादी अजय सर से क्यों नहीं हो रही है?"

कमरे में एक पल को सन्नाटा छा गया। दिलख़ुश की रुलाई फूट पड़ी। यह सवाल जैसे सबके दिल पर चोट कर गया। अजय की आँखों से भी आँसू ढलक पड़े।

अजय के पिता ने जैसे ही उसकी मासूम पुकार सुनी, उन्हें सब समझते देर न लगी। भीतर का बोझ जैसे पलभर में हल्का हो गया। उनके चेहरे पर गहरी शांति आ गयी।

उन्होंने आगे बढ़कर दिलख़ुश और अजय, दोनों को गले से लगा लिया और धीमे स्वर में बोले —
"बेटा... तू चिंता मत कर। तूने मेरी मन की उलझन सुलझा दी है।"

कमरे में मौजूद सबकी आँखें ख़ुशी और राहत से नम थीं।

दिलख़ुश की मासूम हँसी पूरे घर में रौशनी की तरह फैल गई।